श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्रम्

श्री अभिनवचन्द्रेश्वर महादेव जी

श्री कैलास ब्रह्मविद्यापीठ

कैलास आश्रम, ऋषिकेश

श्रीमदभिनवचन्द्रेश्वरो विजयतेतराम्

श्रीकैलासविद्याप्रकाशन पञ्चचत्वारिंशः सोपानः

श्रीपुष्पदन्तप्रणीतम्

ॐ श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्रम् ॐ

विद्यानिधि-ब्रह्मविद्वद्वरिष्ठ-ब्रह्मलीन-अनन्त-श्रीमत्स्वामि-
प्रकाशानन्दपुरीजी-महाराज-प्रणीत-शिवनीराजनसमेतम्।
ध्यानपुष्पाञ्जलि-शिवनामावली-समन्वितम्।

श्रीमत्परमहंस-परिव्राजकाचार्य-श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ-यतीन्द्रकुल-
तिलक-श्रीकैलासपीठाधीश्वर-महामण्डलेश्वर श्री १०८
स्वामिविद्यानन्दगिरिजी-महाराज-
वेदान्त-सर्वदर्शनाचार्यकृत-
सान्वय-पदच्छेद-भाषा
टीका-सहितम्

सम्पादकः

स्वामीनिजानन्द भारती

प्रकाशक:

कैलासविद्या प्रकाशन

प्रथम संस्करण ३०००
द्वितीय संस्करण ३०००
तृतीय संस्करण ५०००
चतुर्थ संस्करण ४०००
पंचम संस्करण १६,०००
षष्ठ संस्करण २५,०००

वि. सं. २०५१ शङ्कराब्दः १२०७ सन् १९९५

मूल्य : १०.००

: पुस्तक प्राप्तिस्थान :

श्री कैलास आश्रम, ऋषिकेश
श्री दशनाम संन्यास आश्रम, भूपतवाला, हरिद्वार
श्री कैलास आश्रम, उजेली, उत्तरकाशी
श्री राम आश्रम, समानामण्डी, पटियाला
श्री कैलास आश्रम, कैलास आश्रम मार्ग माडलटाउन, रोहतक
श्री कैलास विद्यातीर्थ, भाईवीर सिंह मार्ग, नई दिल्ली-१
श्री कैलास विद्यातीर्थ, राजगीर, नालन्दा (बिहार)
श्री कैलासधाम, कैलासधाममार्ग, नई झूँसी।
श्री नर्मदा सत्संग आश्रम, भिलाडियाघाट, पो० शिवपुर (होशंगावाद)

श्री कैलास आश्रम का परिचय

सम्पादकीय

धर्मप्राण भारत 'उत्तराखण्ड' सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानवमात्र का ध्यानाकर्षक रहा है। बड़े-बड़े राजे-महाराजे भी राजवैभव को ठुकराकर चिरशान्ति प्राप्ति के लिए इसी पावन भूमि की ओर दौड़कर आया करते थे। महाभारत विजयी पाण्डवों ने भी संसार से ऊबकर अन्त में उत्तराखण्ड की ही शरण ली थी। हिमालय की गोद से कलकल निनाद करती इठलाती अपने पावन दर्शनों एवं समागमों से संसार को पवित्र करने के लिए जहाँ पुण्य-सलिला भागीरथी धरती पर उतरती हैं, वहाँ ऋषिकेश में उसी त्रैलोक्य पावनी श्रीगंगाजी के दाहिने तट पर लगभग एक सौ चौदह वर्ष पूर्व यतिमण्डलमुकुटमणि अनन्त श्री स्वामी धनराजगिरिजी महाराज वेदान्त के साकार दिव्य-विग्रह अपने शिष्य मण्डली के सहित निवास करते थे। 'आसुप्तेरामृते: कालं नयेत् वेदान्तचिन्तया' यह सूक्ति जिनके जीवन में चरितार्थ हो चुकी थी, जो अध्यात्म पिपासा को शान्त करने के लिए जिज्ञासु के एकमात्र कल्पतरु थे। विश्वविख्यात् श्रीस्वामी विवेकानन्द जी, उनके गुरुभ्राता श्रीस्वामी अभेदानन्दजी एवं दिव्य-विभूति श्रीस्वामी रामतीर्थ जी आदि उस जमाने के सभी विभूतियों ने आपके चरणों में दिव्य वेदान्त-ज्ञानामृत का पान किया था। टिहरी महाराज के अनेकाग्रहों के बाद शिष्य मण्डल की प्रार्थना से महाराज श्री ने पुस्तकालय निर्माण की अनुमति दे दी। तत्पश्चात् श्री महाराज जी ने 'श्री कैलास आश्रम' का स्वरूप उसी को दे दिया। वे यतिराट् सैकड़ों यतियों के सहित उस कैलास आश्रम में निवास कर अहर्निश वेदान्त चर्चा से ऋषिकेश का नाम अन्वर्थ बना रहे थे, जिसे जानकर भगवान् शंकर ने आपको स्वयं ही स्वप्न में दर्शन देकर इस आश्रम में आना पसन्द किया और कहा कि आप चिन्ता न करो 'मुझे केवल आप वेदान्त सुनाते रहना, शेष बातों का उत्तरदायित्व मैं स्वयं ही वहन

करूँगा।' वे ही भगवान् आज कैलास आश्रम में "अभिनव चन्द्रेश्वर" के नाम से विद्यमान हैं। तब से इस आश्रम का सुदृढ़ कार्यक्रम यही रहा है कि स्वाध्याय तथा प्रवचन द्वारा शाङ्कर-अद्वैत-वेदान्त सिद्धान्त का प्रचार करना। महाराजश्री के बाद इस ब्रह्मविद्यापीठ पर अनेक दिव्य-विभूति प्रतिष्ठित हुए, जिनमें अनन्त श्रीविभूषित ब्रह्मलीन महामण्डलेश्वर श्रीस्वामी गोविन्दानन्दगिरिजी महाराज और अनन्त श्री विद्यावाचस्पति महामण्डलेश्वर श्रीस्वामी विष्णुदेवानन्दगिरिजी महाराज का नाम संन्यासी समाज में अत्यन्त गौरव के साथ लिया जाता है। वेदान्त ग्रन्थों पर गंभीरतम मनन के बाद आपने जो पाठ शुद्ध किया है और टिप्पणी लिखी है; उसके बिना हजारों परिश्रम के बाद भी भाष्यादि ग्रन्थों का लगाना असंभव ही है। आपने अपनी प्रतिभा से सैकड़ों महात्माओं को प्रकाण्ड विद्वान् बनाकर भारत का नाम उज्ज्वल किया, जो आज भी संन्यासी समाज के विशिष्ट स्थानों पर प्रतिष्ठित हैं। अनन्त श्रीस्वामी चैतन्यगिरि जी महाराज महामण्डलेश्वर (शास्त्री जी) गणमान्य विद्वानों में एक हैं। जिनके गम्भीरतम शास्त्रीय विवेचन को सुनकर मंत्र-मुग्ध होकर बड़े-बड़े विद्वान् आज भी नतमस्तक हो जाते हैं। वीतराग महान् तपस्वी विद्वद्धौरेय श्री १०८ स्वामी हरिहरतीर्थ जी महाराज कैलास आश्रम के सुदृढ़ स्तम्भ रहे, जिन्होंने अपनी अखण्ड तपस्या एवं अनवरत स्वाध्यायशीलता के द्वारा इस अखंड ज्ञान लंगर को प्रज्ज्वलित कर चालू रक्खा जो आज भी चल रहा है। इस कैलास आश्रम के वर्तमान महामण्डलेश्वर श्री १००८ स्वामी विद्यानन्द गिरिजी महाराज, वेदान्त-सर्वदर्शनाचार्य हैं, जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म एवं शाङ्कर सिद्धान्त के प्रचार में लगा रक्खा है। आप भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों में से एक हैं। आपने काशी में भारतीय सभी दर्शनों का यथावत् अध्ययन के बाद काशी तथा भारत की राजधानी दिल्ली में बारह वर्ष तक प्रधानाचार्य पद पर नियमित रूप से रहकर संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति की अखण्ड उपासना की है। आपकी वाणी में जैसी शक्ति है, वैसी ही लेखनी

में भी है। वेदान्त के दर्जनों पुस्तकें लिखकर सनातन धर्मावलम्बियों का उपकार कर उनके प्रशंसा के पात्र बने हुए हैं। कैलास आश्रम और इसके भक्तसमाज आप जैसे विभूति को पाकर अपने को अत्यन्त गौरवान्वित मान रहा है। अभिनवचन्द्रेश्वर भगवान् आपको स्वस्थ तथा चिरायु रक्खें, जिससे कि आप से समाज के अनेकधा कार्य हो सकें।

ब्रह्मविद्यापीठ कैलास आश्रम से प्रकाशित 'शिवमहिम्नः स्तोत्र' बहुत लोकप्रिय हुआ है। पूर्व संस्करण समाप्त होने पर स्तोत्र की भक्त एवं सन्त समाज में बराबर मांग बनी रही, किन्तु हरद्वारस्थ द्वादशवर्षीय पूर्णकुम्भ एवं ब्रह्मविद्यापीठ के षष्ठपीठाचार्य ब्रह्मलीन महामण्डलेश्वर अनन्त श्री स्वामी विष्णुदेवानन्दगिरि जी महाराज के जन्मशताब्दी समापन समारोह का आयोजन ऋषिकेशस्थ कैलास आश्रम में रखा गया था; इस प्रसंग पर सन्त श्री मुरारिबापू की रामकथा भी हुयी इन्हीं कार्यों में मुझे व्यस्त होने के कारण अवकाश प्राप्त न हो सका। इस संस्करण को पाठकों के समक्ष रखते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि पूर्व प्रकाशित संस्करणों की अपेक्षा इस संस्करण में छपाई का सौन्दर्य रहे, त्रुटियाँ न हो पायें, इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है फिर भी अनवधानता के कारण यदि त्रुटि रह गयी हो तो नीर-क्षीर विवेकीजन क्षमा करेंगे। इत्यों शम्।

पूर्वपीठिका

वेदशास्त्र, स्मृति, पुराण, इतिहास आदि समस्त संस्कृत वाङ्मय में स्तुति भरी पड़ी है। स्तुति की संस्कृत भाषा भी अत्यन्त मनमोहक होती है, इसे विद्वान् लोग जानते हैं। सभी स्तुतियों में गन्धर्वराज श्रीपुष्पदन्ताचार्य निर्मित श्रीशिवमहिम्न:स्तोत्र का स्थान सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। प्राचीन कथा प्रसिद्ध है कि देवताओं में एक गन्धर्व जाति विशेष है, जो देवलोक में गायक मानी जाती है। उस समय गन्धर्वों का राजा पुष्पदन्त था, वह भगवान् शंकर का परम भक्त था। वह श्रीशंकर की पूजा के लिए प्रतिदिन किसी राजा के उपवन से पुष्प चुरा लाता था। विद्वानों के परामर्श से दैवी शक्ति को अवरुद्ध करने के लिए राजा ने उन-उन पुष्प वृक्षों के नीचे शिवनिर्माल्य बिखरवा दिये। प्रतिदिन की भान्ति पुष्प चयन के बाद गन्धर्वराज ने अन्तर्धान होना चाहा परन्तु न हो सका, क्योंकि शिवनिर्माल्य के उल्लंघन से अन्तर्धानादि होने की दिव्य शक्ति उसकी नष्ट हो चुकी थी। ध्यान से देखने पर कारण ज्ञान होते ही अपने अपराध को क्षमा कराने के लिए गन्धर्वराज ने आशुतोष भगवान् शंकर की जो स्तुति की थी, उसी का नाम ''शिवमहिम्न:स्तोत्र'' है। इस पुस्तक के प्रारम्भ में किया गया नीराजन प्रात:स्मरणीय अनन्तश्री विद्यावारिधि श्रीस्वामी प्रकाशानन्दपुरी जी महाराज का बनाया हुआ ''शिवनीराजन स्तोत्र'' भी अनुपम शुद्ध संस्कृत में है, जो स्तुति के सर्वगुणों से संपन्न है। श्री कैलास आश्रम के भक्तों के विशेषाग्रह से हमने इस बार पदच्छेद, अन्वय तथा प्रत्येक पद का पृथक्-पृथक् शब्दार्थ एवं भावार्थ लिखकर प्रकाशन कराया है। आशा है कि जनसामान्य को भी अब इन स्तोत्रों के शब्दार्थ एवं भावार्थ समझने में अत्यन्त सुविधा होगी। इत्यों शम्

तिथिमहाशिवरात्रि: भगवत्पादीय

वि. सं० २०२६ **महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्दगिरि**

अथ श्रीशिवनीराजनस्तोत्रम्

सान्वयार्थम्

ॐ जय गङ्गाधर हर शिव जय गिरिजाधीश,
शिव जय गौरीनाथ त्वं मां पालय नित्यं!
त्वं मां पालय शम्भो कृपया जगदीश ॥
ॐ हर हर हर महादेव !॥

अन्वयार्थः

ॐ = हे सच्चिदानन्द परमात्मन्! **गङ्गाधर!** = हे भागीरथी गङ्गा तथा ज्ञानगङ्गा को धारण करने वाले, **हर !** = हे अशेष (अज्ञान तथा तज्जन्य) दु:खों को हरने वाले, **जय** = आप की जय हो, **गिरिजाधीश !** = हे पार्वतीपति! **शिव!** = कल्याण स्वरूप, **जय** = आपकी जय हो। **गौरीनाथ !** = हे त्रैलोक्यसुन्दरी उमा के पति, **शिव** = हे मङ्गल स्वरूप शिव, **जय** = आप की जय हो। **त्वम्** = आप, **माम्** = मेरा, **नित्यम्** = सदा सर्वदा, **पालय** = पालन करें। **जगदीश !** = हे जगदीश्वर, **शम्भो !** = हे सबको सुख देनेवाले, **त्वम्** = आप, **माम्** = मुझे, **कृपया** = दया करके, **नित्यम्** = अवश्यमेव, **पालय** = पालन करें। **ॐ** = हे ओंकाररूप, **महादेव** = हे देवों में महान्, **हर हर हर** = अज्ञान तथा उससे उत्पन्न आधिदैविकादि त्रिविध तापों को दूर करो, नष्ट करो॥

नीचे के तीन श्लोकों के द्वारा सम्पूर्ण सुन्दरता से युक्त अपने धाम में विराजमान शंकर जी को प्रणाम करते हैं।

पारिजातहरिचन्दनकल्पद्रुमनिचयैः, शिव कल्प०
कुसुमितलतावितानैः २ गुञ्जद्भ्रमरमयैः।
उन्मदकोकिलकूजितशिखिकेकारुचिरैः, हर शिखि०
सहकारैश्च कदम्बैः२, भृङ्गवधूमुखरैः ॥ १ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

कुसुमितलतावितानैः = (जिनके ऊपर) पुष्प भार से लदी हुई लताओं के मण्डप से बने हैं, **गुञ्जद्भ्रमरमयैः** = जिन पर असंख्य भ्रमर गुञ्जार कर रहे हैं, **पारिजातहरिचन्दनकल्पद्रुमनिचयैः** = ऐसे पारिजात, हरितचन्दन एवं कल्पवृक्षों के समूह के कारण, **उन्मदकोकिलकूजितशिखिकेकारुचिरैः** = मदमस्त कोयलों के कूजन तथा मोरों की मधुरध्वनि से रमणीय, **सहकारैः** = आम्रवृक्षों के कारण, **च** = और, **भृङ्गवधूमुखरैः** = जिनपर भ्रमरियाँ शब्द कर रही हैं ऐसे, **कदम्बैः** = कदम्ब वृक्षों के कारण॥ १ ॥

मुदितहंसयुगखेलत्सारसपरिवारैः, शिव सार०
भ्रमरयुवतिमुखराम्बुज २, सुभगैः कासारैः
हारिणिकलधौताद्रेर्देशे मणिरचिते, हर देशे०
भवने सुखमासीनं २, चिन्तामणिनिचिते ॥ २ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

मुदितहंसयुगखेलत्सारसपरिवारैः = प्रसन्नचित्त हंस और हंसनियों के जोड़े खेल रहे हैं तथा सारस पक्षी के परिवार जिनमें, **भ्रमरयुवतिमुखराम्बुजसुभगैः** = फलपुष्पों पर गुञ्जार करते हुए भ्रमरियों के कारण जो अत्यन्त सुन्दर प्रतीत हो रहा है, ऐसे, **कासारैः** = तालाबों के कारण, **हारिणि** = मन को चुरा लेने वाले, **कलधौताद्रेः** = कैलास पर्वत के, **देशे** = दिव्यातिदिव्य प्रदेश में, **मणिरचिते** = मणियों से बने, **भवने** = अपने मंदिर में, **चिन्तामणिनिचिते** = चिन्तामणियों से अच्छी प्रकार बनाये गये॥ २ ॥

पीठे गिरिजासहितं चन्द्रकलाधवलं, शिवमिन्दुक॰
विशरणशरणं देवं २, विपत्क्षयप्रबलम्।
सम्पद्विधानरसिकं जगदङ्कुरकन्दं, हर जग॰
प्रणमामो वयमीशं २, चित्परमानन्दम् ॥ ३ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

पीठे = सिंहासन पर, **चन्द्रकलाधवलम्** = चन्द्रकिरणों के समान श्वेतवर्ण वाले, **विशरणशरणम्** = अशरण शरण, **विपत्क्षयप्रबलम्** = विपत्तियों के नाश करने में समर्थ, **सम्पद्विधानरसिकम्** = सम्पत्ति के देने में सुख का अनुभव करने वाले, **जगदङ्कुरकन्दम्** = विश्वोत्पत्ति का एकमात्र कारण, **चित्परमानन्दम्** = सच्चिदानन्द स्वरूप, **गिरिजासहितम्** = पार्वती के सहित, **सुखम्** = सुख पूर्वक, **आसीनम्** = बैठे हुए, **ईशम्** = शंकर को, **वयम्** = हम, **प्रणमामः** = प्रणाम करते हैं॥ ३ ॥

नीचे के चार श्लोकों में शिवजी के ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए पुनः प्रणाम करते हैं।

यस्याग्रेऽमरवध्वो विबुधाधिपसहिताः, शिव विबु॰
मुदितमनोहरवेषा २, लास्यकलामहिताः।
ताथै ताथै तथेति विविधं नृत्यन्ति, हर विविधं॰
किङ्किणिनूपुरशिञ्जित २, रुचिरं वल्गन्ति ॥ ४ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

यस्य = जिस (पूर्वोक्त विशेषण विशिष्ट) शिव जी के, **अग्रे** = आगे (उनकी कृपाकटाक्ष की बाट देखते हुए), **लास्यकलामहिताः** = नृत्य कला में निपुण, **मुदितमनोहरवेषा** = प्रसन्नचित्त (नाच के उपयोगी) मन को हरने वाले वेष-भूषा धारण किये हुए, **विबुधाधिपसहिताः** = देवराज इन्द्र के सहित, **अमरवध्वः** = देवाङ्गनाएँ, **ताथै ताथै तथा इति** = ताथै इत्यादि प्रकार से ताल देती हुई, **विविधम्** = नाना गतिविधि से, **नृत्यन्ति** = नाचती हैं (तथा), **किङ्किणिनूपुरशिञ्जितरुचिरम्** = कमर में पहनी हुई करधनी एवं पैरों में पहने हुए नूपुरों की छोटी-छोटी घंटियों से रुचि को बढ़ाने वाली, **वल्गन्ति** = (रुनझुन-रुनझुन इत्यादि मनोहर) शब्द को करती हैं॥ ४ ॥

तान्धिक धिनकित्तथेति विविधं वादयते, शिव विविधं॰
मृदङ्गममरी काचित् २, रुचिरं नादयते।
वीणां काचिद्रमणी गानविदाभरणा , हर गान॰
गायति कलमपराचित् २, चिन्तितहरचरणा॥ ५ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

काचिद् अमरी = कोई देवी, **तान्धिक धिनकित् तथा इति** = इस प्रकार मृदङ्गादि बाजों पर ठेका देती हुई, **मृदङ्गम्** = मृदङ्ग को, **विविधम्** = अनेक प्रकार से, **वादयते** = बजाती है और **काचिद्** = कोई-कोई, **गानविदाभरणा** = संगीत कला के जानने वालों में श्रेष्ठ, **रमणी** = देवाङ्गना, **वीणाम्** = वीणा को, **रुचिरं नादयते** = रोचक ढंग से बजाती है तथा **चिन्तितहरचरणा** = शंकर के चरणों में ध्यान में निमग्र, **अपराचित्** = (गान्धर्व विद्याविशारद) अन्य देवी, **कलं गायति** = सुन्दर ढंग से गाती है॥ ५ ॥

रमया सहितो विष्णुर्ब्रह्मा सावित्र्या, शिव ब्रह्मा॰
जिष्णुर्नृत्यति भक्त्या २, मुदितमनाः शच्या॥
तुम्बुरुरुचितं मुरजं विविधं वादयते, हर विविधं॰
नारदमुनिरपि वीणां २, महतीं नादयते॥ ६ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

रमया सहितः = लक्ष्मी के सहित, **विष्णुः** = भगवान् विष्णु, **सावित्र्या** = सावित्री के सहित, **ब्रह्मा** = ब्रह्माजी, **शच्या** = इन्द्राणी के सहित, **जिष्णुः** = देवराज इन्द्र, **मुदितमनाः** = प्रसन्न मन हो, **भक्त्या नृत्यति** = प्रेमपूर्ण भक्ति से नाचते हैं। **तुम्बुरुः** = तुम्बुरु नामक संगीताचार्य, **मुरजम्** = पखवाज बाजे को, **उचितम्** = शास्त्रीय उचित ढंग से, **विविधम्** = अनेक विलक्षण रीति से, **वादयते** = बजाते हैं। एवं **नारदमुनिः अपि** = देवर्षि नारद भी, **महतीं वीणाम्** = महती नामक या बड़ी वीणा को, **नादयते** = बजा रहे हैं॥ ६ ॥

तं प्रसन्नवदनं प्रभुमिन्दुकलाभरणं, शिवमिन्दु०
प्रणमामः करुणाब्धिं २, तापत्रयहरणम्।
देवासुरमणिमुकुटैर्नीराजितचरणं, हर नीरा०
भक्ताभीष्टदकल्पं २, कातरजनशरणम्॥ ७ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

तम् = (जिनके आगे गान, वाद्य और नृत्य हो रहे हैं) उन, **प्रसन्नवदनम्** = (सभी देश, काल तथा परिस्थितियों में) प्रसन्न मुख, **इन्दुकलाभरणम्** = चन्द्रमा की कला को भूषण रूप से धारण करने वाले, **करुणाब्धिम्** = दया के समुद्र, **तापत्रयहरणम्** = दैहिकादि तीनों तापों को नाश करने वाले, **देवासुरमणिमुकुटैः** = देव-दानव के रत्नजटित मुकुटों से, **नीराजितचरणम्** = (नमस्कार करते समय) शिवजी के चरणों की मानों आरती की जा रही है, ऐसे, **भक्ताभीष्टदकल्पम्** = भक्तों के मनोरथ को पूर्ण करने वाले कल्पतरु, **कातरजनशरणम्** = संसार से भयभीत जनों को आश्रय देने वाले, **प्रभुम्** = सर्व समर्थ परमात्मा को, **प्रणमामः** = हम साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं॥ ७ ॥

जटाकिरीटे गङ्गां चन्द्रकलां भाले, शिवमिन्दुकलां०
नेत्रेष्विन्दुशिखीना २, नधरे स्मितममले।
कण्ठे गरलं पाणौ वरमभयं शूलं, हर वर०
पीयूषं कटिदेशे २, कृत्तिं च दुकूलम्॥ ८ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

जटाकिरीटे = जटामुकुट में, **गङ्गाम्** = भागीरथी गंगा को (धारण करने वाले), **भाले** = मस्तक पर, **चन्द्रकलाम्** = द्वितीया के चन्द्रमा को, **नेत्रेषु** = तीनों आँखों में, **इन्दुशिखीनान्** = सूर्य, चन्द्र तथा अनल को, **अमले-अधरे स्मितम्** = निर्दोष होठों पर मधुर मुस्कान को, **कण्ठे गरलम्** = कण्ठ में हलाहल विष को, **पाणौ अभयम्** = हाथ में सबको अभय प्रदान करने वाले, **वरम् शूलम्** = श्रेष्ठ विशाल त्रिशूल को (और दूसरे हाथ में), **पीयूषम्** = अमृतकलश को (धारण करने वाले एवं), **कटिदेशे** = कमर में, **कृत्तिं दुकूलम्** = हाथी के चर्मरूप वस्त्र को, **च** = और॥ ८ ॥

श्रीगिरिराजकिशोरीमङ्के निदधानं, शिवमङ्के०
निखिलसुरासुरमौलीन् २, चरणेऽमितदानम्।
शम्भुं तडिदभिगौरं कृतनागाभरणं, हर कृत०
भजति स गच्छति मुक्तिं २, तिमिरापाकरणम्॥ ९ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

अङ्के = गोद में, **श्रीगिरिराजकिशोरीम्** = श्री पर्वतरराज हिमालय की कन्या को, **चरणे** = चरणों में (नमस्कार के बहाने से), **निखिलसुरासुरमौलीन्** = समस्त देव-दानव के मस्तकों को, **निदधानम्** = धारण करने वाले, **कृतनागाभरणम्** = विषैले सर्पों को गले का हार बनाने वाले, **तडिदभिगौरम्** = बिजली के समान चमकीले गौरवर्ण वाले **अमितदानम्** = अपार ऐश्वर्य के प्रदाता, **तिमिरापाकरणम्** = संसार दुःख के कारण अज्ञानान्धकार के नाशक, **शम्भुम्** = सुख देने वाले सुखस्वरूप शंकर का (जो प्राणी) **भजति** = भजन करता है, **सः मुक्तिम् गच्छति** = वह मोक्ष को प्राप्त करता है॥ ९॥

निरुपधिकरुणासिन्धुर्भीतत्राणपरः, शिव भीत०
दुःखक्षतये भूयात् २, कातरबन्धुवरः।
यः श्वेतं यमभीतं स्मृतमात्रोऽरक्षत्, हर स्मृतमा०
मा भैषीरिति वादी २, कालं समतक्षत्॥ १०॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

यः = जिन्होंने, **यमभीतम्** = मृत्यु से अत्यन्त डरे हुए, **श्वेतम्** = श्वेत नामक राजा के, **स्मृतमात्रः** = (बिना किसी सेवा-पूजा के) स्मरणमात्र से ही, **अरक्षत्** = बचा लिया था (और) **मा भैषीः** = 'डरो नहीं' **इति वादी** = ऐसा बोलने के स्वभाव वाले (जिन शंकर ने) **कालम्** = मृत्यु को (भी नगण्य समझ कर) **समतक्षत्** = सर्वथा मार डाला है (वे) **निरुपधिकरुणासिन्धुः** = (बिना किसी सेवा-पूजा के ही) अपार करुणा के सागर, **भीतत्राणपरः** = डरे हुए की रक्षा में तत्पर, **कातरबन्धुवरः** = निराश्रित जीवों के आश्रय देने वाले बान्धवों में श्रेष्ठ, (हमारे) **दुःखक्षतये** = दुःखों के नाश के लिए, **भूयात्** = अनुकूल होवें॥ १०॥

आनन्दाय महेशो युष्माकं भवतात्, शिव युष्माकं०
जन्मजरामृतिशोकात् २, करुणानिधिरवतात्।
येन सुरासुरनिवहस्त्रातो विषभीतो, हर त्रातो०
नीलकण्ठ इति भूयो २, निगमगणैर्गीतः॥ ११॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

विषभीतः = (अमृत के लिए मथे गए समुद्र से निकले हुए) विष से भयभीत, **सुरासुरनिवहः** = देव और दानव समुदाय को, **येन त्रातः** = जिन्होंने रक्षा की है। अतएव* **नीलकण्ठः इति** = नीलकण्ठ इस नाम से, **निगमगणैः** = सभी वेदों ने (जिनको), **भूयः** = बारम्बार, **गीतः** = गाया है, (वे ही) **करुणानिधिः** = दया के सागर, **महेशः** = सर्व नियन्ता महेश्वर, **जन्मजरामृतिशोकात्** = जन्म, बुढ़ापा और मृत्यु की चिन्ता एवं ताप से (आप सब की) **अवतात्** = रक्षा करें, तथा **युष्माकम्** = आप सब के, **आनन्दाय** = आनन्द देने वाले, **भवतात्** = होवे॥ ११॥

---

* ऋषिकेश से ६, ७ मील दूर पर्वतीय प्रदेश में "नीलकण्ठ" महादेव का प्राचीन मन्दिर है। इस नीराजन स्तोत्र के रचयिता प्रातः स्मरणीय श्री १०८ स्वामी प्रकाशानन्दपुरी विद्यानिधिजी महाराज एकान्त शान्त प्रदेश जानकर वहाँ पर कभी-कभी रहा करते थे। अतः कैलासाश्रम एवं ऋषिकेश के महात्मा लोग उन्हें भी "नीलकण्ठ" इस उपनाम से सम्बोधित करते थे।

यः सृष्ट्यादिविधानं ब्रह्माच्युतरुद्रैः, शिव ब्रह्मा०
निजरूपैस्तनुते यो २, दुर्ज्ञेयः क्षुद्रैः।
तं प्रकाशसुखमच्छं बाधावधिमीशं, हर बाधा०
तनुभेदैरिव भिन्नं २, श्रयत धियामीशम्॥ १२ ॥
ॐ हर हर हर महादेव ! ॥

यः निजरूपैः = जो, अपने ही स्वरूप, **ब्रह्माच्युतरुद्रैः** = ब्रह्मा, विष्णु और रुद्ररूप से, **सृष्ट्यादिविधानम्** = सृष्टि, पालन और संहार, **तनुते** = (बारम्बार) करते रहते हैं (और) **यः क्षुद्रैः** = जो क्षुद्र पुरुषों से, **दुर्ज्ञेयः** = समझा जाना अत्यन्त कठिन है, **तम्-अच्छम्** = उन विशुद्ध, **प्रकाशसुखम्** = प्रकाशानन्द स्वरूप, **बाधावधिम्** = सम्पूर्ण नामरूपात्मक कल्पित जगत् के बाध का अधिष्ठान, **तनुभेदैः** = ब्रह्मादि भिन्न-भिन्न विग्रहों के भेद से, **भिन्नम्-इव** = पृथक्-पृथक् से (प्रतीत होते हुए भी वस्तुतः एक अद्वितीय है। उन्हीं) **धियाम्** = बुद्धि वृत्तियों के, **ईशम्** = नियामक महादेव का (आप सब) **श्रयत** = आश्रय (शरण) लेवें॥ १२ ॥

ॐ जय गङ्गाधर हर शिव जय गिरिजाधीश !
शिव जय गौरीनाथ ! त्वं मां पालय नित्यं
त्वं मां पालय शम्भो! कृपया जगदीश॥
ॐ हर हर हर महादेव! ॥

इति श्रीहृषीकेशकैलासाश्रमनिवासिविद्वद्वरिष्ठब्रह्मनिष्ठपरमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री १०८ श्रीमत्स्वामिप्रकाशानन्दपुरीभिर्विनिर्मितं शिवनीराजनस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

अथ ध्यानम्

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ १ ॥

अन्वयार्थः

उमापतिम् = पार्वती पति या ब्रह्मविद्या के प्रदाता, **सुरगुरुम्** = इन्द्रादि देवों को भी ज्ञान देने वाले, **देवम्** = महादेव की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **पन्नगभूषणम्** = विषधर सर्पों को जेवर बनाने वाले, **मृगधरम्** = यज्ञस्वरूप मृग को धारण करने वाले की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **पशूनाम्** = (अविद्यादि पाश से बँधे हुए) जीवों के, **पतिम्** = पाश से छुड़ाकर पालन करने वाले की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **सूर्यशशाङ्कवह्निनयनम्** = सूर्य, चन्द्र तथा अग्निरूप तीन नेत्र वाले की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **मुकुन्दप्रियम्** = (स्वामी एवं सेवक उभयरूप से) विष्णु के प्रिय की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **भक्तजनाश्रयम्** = भक्तों के जीवनाधार, **वरदम्** = वर देकर कृतार्थ करने वाले की, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ। **शङ्करम्** = कल्याण प्रदान करने वाले, **शिवम्** = कल्याण स्वरूप शिव की, **वन्दे** = मैं बार-बार वन्दना करता हूँ॥ १ ॥

शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम्।
नागं पाशं च घण्टां डमरुकसहितां साङ्कुशं वामभागे
नानालङ्कारदीप्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि॥ २ ॥

शान्तम् = सम्पूर्ण दोष से रहित शान्तस्वरूप, **पद्मासनस्थम्** = पद्मासन से बैठे, **शशधरमुकुटम्** = चन्द्रमा को मुकुटरूप में धारण करने वाले, **पञ्चवक्त्रम्** = (ईशान, अघोर, तत्पुरुष, वामदेव और सद्योजात रूप) पाँच मुख वाले, **त्रिनेत्रम्** = तीन नेत्र वाले या त्रिकालज्ञ, **शूलम् वज्रं खड्गं परशुम** = (पापियों को उचित दंड देकर धर्मात्मा बनाने के लिए) त्रिशूल, वज्र, तलवार, फरसे (कुल्हाड़े), **च-अभयदम्** = और (मोक्ष सूचक) अभयप्रद मुद्रा को, **दक्षिणाङ्गे** = (अपने पाँचों) दाहिने हाथों में, **वहन्तम्** = धारण करने वाले, **नागं पाशं घण्टां च** = नाग, जीव को बाँधने के वाले माया पाश, घण्टा और **डमरुकसहिताम्** = डमरू के सहित, **साङ्कुशम्** = अङ्कुश को, **वामभागे** = बायें पाँचों हाथों में (धारण करने वाले) **नानालङ्कारदीप्तम्** = अनेक प्रकार के अलंकारों से शोभायमान, **स्फटिकमणिनिभम्** = स्फटिक मणि के समान तेजोमय कान्ति वाले, **पार्वतीशम्** = हिमालयतनया के पति महादेव को, **नमामि** = मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि॥ ३ ॥

कर्पूरगौरम् = कपूर के समान गौराङ्ग, **करुणावतारम्** = दया के अवतार, **संसारसारम्** = नाशवान संसार के साररूप, **भुजगेन्द्रहारम्** = सहस्रफण वाले शेष को गले के हार बनाने वाले, **भवानीसहितम्** = पार्वती के सहित, **हृदयारविन्दे** = हृदय कमल में, **सदा वसन्तम्** = सदा निवास करने वाले, **भवम्** = सम्पूर्ण सद्गुण के जनक शिव को, **नमामि** = मैं नमस्कार करता हूँ॥ ३ ॥

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति॥ ४ ॥

इसका अर्थ श्रीशिवमहिम्न:स्तोत्र के ३२वें श्लोक में देखें।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥ ५ ॥

देवदेव! = हे देवों के देव! **त्वम्-एव** = तू ही, **मम माता** = मेरी माता हो, **त्वम्-एव** = तू ही, **पिता** = (मेरा) पिता हो, **त्वम्-एव** = तू ही (मेरा) **बन्धु** = बन्धु हो, **च** = और, **सखा** = सखा, **च** = और, **त्वमेव** = तू ही, **विद्या** = (मेरी) विद्या, **त्वमेव** = तू ही हो, **द्रविणम्** = धन भी, **त्वमेव** = तू ही हो (विशेष क्या कहें, मेरा) **सर्वम्** = (उक्तानुक्त) सब कुछ, **त्वमेव** = तुम ही हो॥ ५ ॥

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम्।
*** विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व**
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो॥ ६ ॥

करचरणकृतम् = हाथ और पैर से किये गये, **वाक्कायजम्** = शरीर और वाणी से उत्पन्न, **वा** = अथवा, **श्रवणनयनजम्** = श्रोत्र और नेत्र से उत्पन्न, **वा मानसम** = या मन से हो गये, **वा कर्मजम्** = या अन्य किसी क्रिया से जन्य, **विहितम्** = शास्त्रविहित कर्म का अकरण या **अविहितम्** = शास्त्रनिषिद्ध कर्म का करणरूप (जो कोई मेरे), **अपराधम्** = अपराध हों, **करुणाब्धे!** = हे दया के सागर! **शम्भो** = हे शम्भो! **एतत्-सर्वम्** = इन सभी (हमारे अपराधों को), **क्षमस्व** = क्षमा (माफ) कर दो, **श्रीमहादेव** = हे श्रीमहादेव! **जय जय** = (आपकी) जय हो, जय हो॥ ६ ॥

*विदितमविदितं वेति पाठान्तरम्

चन्द्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे गङ्गाधरे शङ्करे
सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे।
दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे
मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमचलामन्यैस्तु किं कर्मभिः॥ ७ ॥
हरिः ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

चन्द्रोद्भासितशेखरे = चन्द्रमा से प्रकाशित ललाट वाले, **स्मरहरे** = कामदेव के नाशक, **गङ्गाधरे** = गंगाजी को शिर पर धारण करने वाले, **सर्पैः** = साँपों से, **भूषितकण्ठकर्णविवरे** = सुशोभित कण्ठ और कर्ण विवर वाले, **नेत्रोत्थ-वैश्वानरे** = कामदाहक वैश्वानराग्नि उठता है जिससे ऐसे तृतीय नेत्र वाले, **दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे** = दाँत वाले हाथी के चर्म से बने सुन्दर वस्त्र को धारण करने वाले, **त्रैलोक्यसारे** = तीनों लोकों के सारतत्त्व, **हरे** = शरणागत के दुःख नाशक, **शङ्करे** = सुख प्रदान करने वाले महादेव में, **मोक्षार्थम्** = मोक्ष प्राप्ति के लिए, **चित्तवृत्तिम्** = चित्त की वृत्ति को, **अचलाम् कुरु** = स्थिर करो, **अन्यैः कर्मभिः** = अन्य कर्मों से, **तु किम्** = तो क्या प्रयोजन सिद्ध होगा अर्थात् कुछ भी प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा॥ ७ ॥

हरिः = अविद्या एवं तज्जन्य समस्त दुःखों के नाशक, **ओम्** = सच्चिदानन्द स्वरूप (जो है) उस **तत्पुरुषाय** = तत्पद लक्ष्यार्थ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विद्यमान शिव को हम, **विद्महे** = जानते हैं, **महादेवाय** = महादेव का ध्यान, **धीमहि** = हम धारण करते हैं, **तत्** = जिससे कि वह, **रुद्रः** = पापियों को रुलाने वाले रुद्र, **नः** = हमें (सन्मार्ग में), **प्रचोदयात्** = प्रेरित करे॥ ८ ॥

अथ मन्त्रपुष्पाञ्जलिः

हरिः ॐ

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्त्तये, सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्त्रकोटियुगधारिणे नमः॥ १ ॥

ॐ अनन्ताय = देशकृत, कालकृत तथा वस्तुकृत अन्त से रहित, **सहस्त्रमूर्त्तये** = अनन्त शरीर वाले, **सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे** = असंख्य हाथ, पैर, आँख, जंघा और मस्तक वाले, **सहस्त्रनाम्ने** = अगणित नाम वाले, **सहस्त्रकोटियुगधारिणे** = असंख्य कोटि युगों के धारण करने वाले, **शाश्वते** = सनातन नित्य, **पुरुषाय** = पुरुष परमात्मा को, **नमः नमः अस्तु** = नमस्कार हो नमस्कार हो॥ १ ॥

विष्णुब्रह्मेन्द्रदेवै रजतगिरितटात्प्रार्थितो योऽवतीर्य,
शाक्याद्युद्दामकण्ठीरवनखरकराघातसञ्जातमूर्च्छाम्।
छन्दोधेनुं यतीन्द्रः प्रकृतिमगमयत्सूक्तिपीयूषवर्षैः,
सोऽयं श्रीशङ्करार्यो भवदवदहनात्पातु लोकानजस्त्रम्॥ २ ॥

यः = जिन आशुतोष शंकर ने, **विष्णुब्रह्मेन्द्रदेवैः** = ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्रादि देवों के द्वारा, **प्रार्थितः** = प्रार्थना किये जाने पर, **रजतगिरितटात्** = कैलास पर्वत के शिखर से, **यतीन्द्रः** = (शंकराचार्यरूप में) यति श्रेष्ठ हो, **अवतीर्य** = अवतार धारण कर, **शाक्याद्युद्दामकण्ठीरवनखरकराघातसञ्जातमूर्च्छाम्** = बौद्ध आदि नास्तिक बलवान सिंहों के तीखे नख वाले पंजों के प्रहार से मूर्च्छित हुई, **छन्दोधेनुम्** = (समस्त कामनाओंको पूर्ण करने वाली) वेदरूपी कामधेनु को, **सूक्तिपीयूषवर्षैः** = सुन्दर वचन रूप सुधा वृष्टि से, **प्रकृतिम्** = मूर्च्छा रहित स्वस्थ जीवन, **अगमयत्** = प्राप्त कराया। **सः अयम्** = वही यह, **श्री शङ्करार्यः** = श्रीभगवत्पाद आचार्य शंकर, **भवदवदहनात्** = संसारदावाग्नि के दाह से (सन्तप्त) **लोकान्** = संपूर्ण जन समुदाय को, **अजस्त्रम्** = सदा सर्वदा, **पातु** = रक्षा करे॥ २॥

पूर्णः पीयूषभानुर्भवमरुतपनोद्दामतापाकुलानां,
प्रौढाज्ञानान्धकारावृतविषमपथभ्राम्यतामंशुमाली।
कल्पः शाखी यतीनां विगतधनसुतादीषणानां सदा नः,
पायाच्छ्रीपद्मपादादिममुनिसहितः श्रीमदाचार्यवर्यः॥ ३ ॥

भवमरुतपनोद्दामतापाकुलानाम् = संसाररूप मरुभूमि में पड़े हुए सूर्य के तीक्ष्ण ताप से व्याकुल प्राणिसमुदाय के लिए, (जो शंकराचार्य) **पूर्णः** = पूर्ण, **पीयूषभानुः** = चन्द्रमा (के समान शीतलता प्रदान करने वाले हैं)। **प्रौढाज्ञानान्धकारावृतविषमपथभ्राम्यताम्** = घोर अज्ञानरूप अंधकार से आवृत विषय भवाटवी में भटकने वाले प्राणी के लिए, (सन्मार्ग दर्शक), **अंशुमाली** = प्रखर प्रकाशमय सूर्य हैं। **विगतधनसुतादीषणानाम्** = धनपुत्रादि ईषणात्रय से छूटे हुए वीतराग, **यतीनाम्** = संन्यासियों के लिए, **कल्पः शाखी** = कल्प वृक्ष हैं। (वे ही) **श्रीमदाचार्यवर्यः** = ऐश्वर्य सम्पन्न आचार्य प्रवर भगवत्पाद भाष्यकार, **पद्मपादादिममुनिसहितः** = आचार्य पद्मपादादि मननशील शिष्यों के सहित, **सदा नः** = सर्वदा हमारी, **पायात्** = रक्षा करें॥३॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं,
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं,
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि॥ ४ ॥

ब्रह्मानन्दम् = ब्रह्मानन्द स्वरूप, **परमसुखदम्** = परमानन्दरूप मोक्ष के प्रदाता, **केवलम्** = अविद्या एवं उसके कार्य से असंबद्ध, **ज्ञानमूर्तिम्** = ज्ञान के साक्षात् विग्रह, **द्वन्द्वातीतम्** = रागद्वेषादि द्वन्द्वों से परे, **गगनसदृशम्** = आकाशवत् असंग और व्यापक, **तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्** = 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्यों के लक्ष्यार्थ स्वरूप, **एकम्** = अद्वितीय (सजातीय भेदशून्य), **नित्यम्** = उत्पत्ति और नाश से रहित, **विमलम्** = माया मल से रहित, **अचलम्** = चलनादि क्रिया से शून्य, **सर्वधीसाक्षिभूतम्** = सबकी बुद्धियों के साक्षी, **भावातीतम्** = जन्मादिषड्भाव विकार से रहित, **त्रिगुणरहितम्** = त्रिगुणातीत, **तं सद्गुरुम्** = उस सत्तत्त्व के उपदेशक को, **नमामि** = मैं बारम्बार नमस्कार करता हूँ॥४॥

नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च।
व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम्॥ ५ ॥

श्रीशङ्कराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम्।
तं तोटकं वार्तिककारमन्यानस्मद्गुरून्संततमानतोऽस्मि॥ ६ ॥

नारायणम् = (संन्यासियों के) आद्याचार्य नारायण को, **अथ-अस्य शिष्यम्** = और उनके शिष्य, **पद्मभवम्** = ब्रह्माजी को, **वसिष्ठम्** = (ब्रह्मा के शिष्य) वसिष्ठ जी, **शक्तिम् च** = (वसिष्ठ के शिष्य) शक्ति को और, **तत्पुत्रपराशरम्** = उनके पुत्र पराशर को, **व्यासम्** = (पराशर के पुत्र) व्यास जी, **शुकं च** = (व्यास के शिष्य) शुकदेव जी और, **गौडपदम्** = उनके शिष्य गौडपादाचार्य जी, **महान्तम्** = (गौडपाद के शिष्य ज्ञान तथा तप में) महान्, **गोविन्दयोगीन्द्रम्** = योगियों में श्रेष्ठ गोविन्द भगवत्पाद को, **अथ शिष्यम्** = और, (गोविन्द भगवत्पाद के) शिष्य, **श्रीशङ्कराचार्यम्** = श्रीमच्छङ्कर भगवत्पादाचार्य को, **अस्य शिष्यम्** = इनके शिष्य, **पद्मपादम्** = पद्मपादाचार्यजी को, **हस्तामलकम्** = हस्तामलकाचार्य को, **तम्** = (गुरुभक्ति में निपुण) उस, **तोटकम्** = तोटकाचार्य जी, **च** = और, **वार्तिककारम्** = वार्तिककार (सुरेश्वराचार्यजी) को, **च अन्यान्** = तथा अन्य सभी, **अस्मद्गुरून्** = अपने गुरुजनों को, **संततम्** = सदा सर्वदा, **आनतः** = सभी प्रकार से नतमस्तक, **अस्मि** = होता हूँ॥ ५-६ ॥

विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतं
पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया।
यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं
तस्मै श्रीगुरुमूर्त्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्त्तये॥ ७ ॥

यः = जो (सनकादिकों के उपदेश के लिए) दक्षिणामूर्त्तिरूप धारण करने वाले सदाशिव), **दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यम्** = दर्पण में दीखने वाली नगरी के प्रतिबिम्ब के समान, **निजान्तर्गतम्** = अपने भीतर दीखने वाले, **विश्वम्** = संपूर्ण विश्व को (मिथ्या), **पश्यन्** = देखते हुए, **यथा निद्रया** = जैसे निद्रा से, **आत्मनि** = अपने भीतर (होते हुए भी स्वप्न दृश्य को), **बहिः** = बाहर, **उद्भूतम् इव** = उत्पन्न हुए के जैसे (देखते हैं वैसे ही), **मायया** = अघटित घटना पटीयसी-अनिर्वचनीया माया से (आत्मा में कल्पना से प्रतीत होने वाले सम्पूर्ण विश्व को मिथ्या मानते हुए अपने दिव्य उपदेश से सनकादिकों को स्वरूप का) **प्रबोधसमये** = प्रत्यक्ष बोध कराते समय, **अद्वयम्** = अद्वितीय, **स्वात्मानम् एव** = निजरूप का ही, **साक्षात्कुरुते** = साक्षात् बोध करा देते हैं, **तस्मै** = उन्हीं, **श्रीगुरुमूर्त्तये** = श्रीगुरुमूर्ति, **श्रीदक्षिणामूर्त्तये** = श्रीदक्षिणामूर्ति धारी सदाशिव को, **इदं नमः** = यह दैनिक नमस्कार है॥ ७ ॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ ८ ॥

येन = जिस सद्गुरुदेव ने, **अखण्डमण्डलाकारम्** = अखण्ड ब्रह्माण्ड के आकार, **चराचरम्** = जड़-चेतन सम्पूर्ण जगत, **व्याप्तम्** = व्याप्त किया हुआ है, (और) **येन** = जिस सद्गुरुदेव ने, **तत्पदम्** = तत्पद के लक्ष्यार्थ को, **दर्शितम्** = प्रत्यक्ष अनुभव करा दिया है, **तस्मै श्रीगुरवे** = उसी सद्गुरुदेव भगवान् को, **नमः** = (हमारा बारम्बार) नमस्कार है॥ ८॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ ९ ॥

गुरुः देवः = (जो) गुरुदेव (शिष्य के हृदय में ज्ञानोत्पन्न करने में) **ब्रह्मा** = ब्रह्मा जी हैं (उत्पन्न ज्ञान की रक्षा में) **गुरुः विष्णुः** = गुरु विष्णु भगवान् हैं (और समस्त मानस विकार के संहार करने में जो) **गुरुः महेश्वरः** = गुरुदेव साक्षात् महेश्वर हैं (विशेष क्या कहें) **गुरुः साक्षात्** = गुरुदेव तो साक्षात्, **परं ब्रह्म** = परब्रह्म स्वरूप ही हैं, **तस्मै श्रीगुरवे** = उस श्रीसद्गुरुदेव को हमारा, **नमः** = अनन्त बार नमस्कार है॥ ९ ॥

श्रुतिस्मृतिपुराणानामालयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शङ्करं लोकशङ्करम्॥ १०॥

श्रुतिस्मृतिपुराणानाम् = श्रुति, स्मृति और पुराणादि समस्त सद्ग्रन्थों के, **आलयम्** = (जङ्गम) भण्डार, **करुणालयम्** = दया के केन्द्र, **लोकशङ्करम्** = संपूर्ण लोकों को सुख देने वाले, **भगवत्पादम्** = भगवत्पादाचार्य, **शङ्करम्** = साक्षात् शंकर को, **नमामि** = मैं नमस्कार करता हूँ॥ १० ॥

शङ्करं शङ्कराचार्यं केशवं बादरायणम्।
सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥ ११ ॥

शङ्कराचार्यम् = श्रीमदाद्य शंकराचार्य जी, **शङ्करम्** = साक्षात् शंकर हैं, (और) **बादरायणम्** = वेदव्यास, **केशवम्** = साक्षात् विष्णु स्वरूप हैं, **सूत्रभाष्यकृतौ** = ब्रह्मसूत्र तथा उसके भाष्य कर्ता, **भगवन्तौ** = दोनों भगवत् स्वरूपों को, **पुनः पुनः** = बारम्बार, **वन्दे** = मैं वन्दना करता हूँ॥ ११ ॥

ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्त्तिभेदविभागिने।
व्योमवद्व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्त्तये नमः॥ १२ ॥

ईश्वरः = परमेश्वर, **गुरुः** = सद्गुरु और **आत्मा इति** = आत्मा इस प्रकार, **मूर्त्तिभेदविभागिने** = मूर्तिरूप उपाधि के भेद से विभाग वाले (दीखने पर भी वस्तुतः), **व्योमवद्व्याप्तदेहाय** = आकाश की भाँति (सर्वत्र अविभक्त रूप से) व्यापक स्वरूप, **दक्षिणामूर्त्तये** = श्रीदक्षिणामूर्ति सदाशिव को, **नमः** = (भूयो भूयो) नमस्कार है॥१२॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥ १३॥

देवाः = विद्वानों ने, **यज्ञेन** = देव पूजादिरूप याग से, **यज्ञम्** = यज्ञ स्वरूप विष्णु का, **अयजन्त** = (पहले भी) यजन किया था, **तानि** = अत एव वे पूजादि सत्कर्म, **प्रथमानि** = प्रारम्भिक या प्रमुख, **धर्माणि** = धर्म (माने जाते) **आसन्** = थे। (इसीलिए आज भी) **ते ह** = वे विद्वान् निःसन्देह, **महिमानः** = महिमान्वित हो, **नाकम्** = स्वर्ग या परमानन्द रूप मोक्ष का, **सचन्त** = सेवन करते हैं, **यत्र** = जहाँ पर, **पूर्वे साध्याः** = प्राचीन साधक गण, **देवाः** = देव स्वरूप हो, **सन्ति** = विद्यमान हैं॥ १३ ॥

राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे॥ १४॥

राजाधिराजाय = राजाओं का राजा, **प्रसह्यसाहिने** = अपने प्रयोजन के बिना ही सहयोग प्रदान करने के स्वभाव वाले, **वैश्रवणाय** = कुबेर को, **वयम्** = हम (उपासक) **नमः** = नमस्कार, **कुर्महे** = करते हैं॥ १४ ॥

स मे कामान् कामकामाय मह्यम्।
कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु॥ १५ ॥

मे = (अत एव) मेरे, **कामेश्वरः** = मनोरथ को पूर्ण करने वाले, **सः वैश्रवणः** = वे भगवान्, **कामकामाय** = चतुर्विध पुरुषार्थ चाहने वाले, **मह्यं कामान्** = मुझे सम्पूर्ण भोग एवं मोक्ष, **ददातु** = प्रदान करें॥ १५ ॥

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः॥ १६ ॥

वैश्रवणाय = विश्रवण के लाडले, **महाराजाय** = महाराज, **कुबेराय** = कुबेर को, **नमः** = (अनेक बार) नमस्कार है॥ १६ ॥

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सम्बाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः॥ १७ ॥

विश्वतश्चक्षुः = सभी ओर नेत्रवाला (बाह्याभ्यन्तर जगत् का द्रष्टा) **उतविश्वतोमुखः** = और सभी ओर मुखवाला, **विश्वतोबाहुः** = सभी ओर हाथ वाला, **उत विश्वतस्पात्** = तथा सभी ओर पैर वाला, **द्यावाभूमी** = आकाश और पृथिवी को, **जनयन्** = (अपनी माया से) पैदा करता हुआ भी, **एकः देवः** = अद्वितीय परमात्मा (मनुष्यादि) को, **बाहुभ्याम्** = दो-दो हाथों से, **सन्धमति** = संयुक्त करता है, **पतत्रैः** = (तथा पंखवालों को पंखों से, **सं (धमति)** = संयुक्त करता है, अर्थात् सबकी आवश्यकता की पूर्ति यथासंभव करता है॥ १७ ॥

हरिः ॐ तत्सत् मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि॥ १८ ॥

हरिः ॐ = हरि ही ॐ है, **तत्सत्** = और वही तत् तथा सत् भी है, (उन्हीं को) **मन्त्रपुष्पाञ्जलिम्** = उक्त मन्त्रों से अभिमंत्रित पुष्पाञ्जलि, **समर्पयामि** = समर्पित करता हूँ॥ १८ ॥

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
भक्त्या दत्तानि पूजार्थं गृहाण परमेश्वर॥ १९ ॥

परमेश्वर! = हे परमात्मन्! **यथाकालोद्भवानि** = समयानुसार उत्पन्न, **च** = तथा, **नानासुगन्धपुष्पाणि** = अनेक दिव्य गन्ध युक्त पुष्पों को, **पूजार्थम्** = (मैंने आपकी) पूजा के लिए, **भक्त्या दत्तानि** = भक्ति पूर्वक समर्पित किया है, **गृहाण** = (अतः हे नाथ! कृपया) इन्हें ग्रहण करें॥ १९ ॥

अथ श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्रम्

पदच्छेदान्वय-भावार्थयुतम्

गजाननं भूतगणाधिसेवितं, कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं, नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥

पदच्छेदः-गजाननम्, भूतगणाधिसेवितम्, कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्। उमासुतम्, शोकविनाशकारकम्, नमामि, विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥

अन्वयार्थः

भूतगणाधिसेवितम् = भूतगणों से स्वाधिकार के अनुरूप सेवित, **कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्** = कैंथ और जामुन के अच्छे फलों के भक्षण करने वाले, **शोकविनाशकारकम्** = शोक को विनाश करने वाले, **विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्** = निखिल विघ्नों के नियामक हैं पदकमल जिनके उन्हीं, **उमासुतम्** = पार्वती जी के लाडले, **गजाननम्** = गजवदन श्री गणेश जी को, **नमामि** = मैं (सर्वप्रथम) नमस्कार करता हूँ॥

श्रीपुष्पदन्त उवाच

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृण-
न्ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥ १॥

पदच्छेदः– महिम्नः, पारम्, ते, परम्, अविदुषः, यदि, असदृशी, स्तुतिः, ब्रह्मादीनाम्, अपि, तद्, अवसन्नाः, त्वयि, गिरः।अथ, अवाच्यः, सर्वः, स्वमतिपरिणामावधि, गृणन्, मम, अपि, एषः, स्तोत्रे, हर, निरपवादः, परिकरः॥ १ ॥

हर! = अविद्या तथा उससे उत्पन्न सम्पूर्ण दुःखों के हरनेवाले महादेव! **ब्रह्मादीनां गिरः अपि** = (जबकि वेद निर्माता) ब्रह्मादि देवों की वाणी (स्तुति) भी, **त्वयि** = निर्गुण या अनन्त गुणयुक्त आपमें, **अवसन्नाः** = अपर्याप्त अननुरूप है, **तत् ते** = तो (निर्गुण तथा अनन्त गुणयुक्त) आपकी, **महिम्नः** = महिमा (ऐश्वर्य) के, **परम्** = अन्तिम, **पारम्** = सीमा तक, **अविदुषः स्तुतिः** = न जानने वाले (मुझ जैसों के द्वारा की गयी) स्तुति, **यदि-असदृशी** = यदि आपके स्वरूपानुरूप नहीं हो, तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। **अथ** = और यदि, **स्वमतिपरिणामावधि** = अपनी बुद्धि वैभव शक्ति के अनुरूप, **गृणन्** = स्तुति करता हुआ, **सर्वः** = सभी, **अवाच्यः** = निर्दोष है, (तब तो) **स्तोत्रे** = आपकी गुणगान रूप स्तुति के विषय में, **मम-अपि** = मेरा भी, **एषः परिकरः** = यह प्रयत्न, **निरपवादः** = निर्दोष ही है।

भावः–*अपनी बुद्धि सामर्थ्य के अनुसार सभी के द्वारा की गयी परमेश्वर की स्तुति निर्दोष ही मानी जाती है, क्योंकि परमेश्वर के अनन्त गुणों को न कोई पूर्णरूप से जान सकता है और न पूर्णतया वाणी से कह ही सकता है॥ १ ॥*

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः॥ २ ॥

पदच्छेदः– अतीतः, पन्थानम्, तव, च, महिमा, वाङ्मनसयोः, अतद्व्यावृत्त्या, यम्, चकितम्, अभिधत्ते, श्रुतिः, अपि। सः, कस्य, स्तोतव्यः, कतिविधगुणः, कस्य, विषयः, पदे तु, अर्वाचीने, पतति, न, मनः, कस्य, न, वचः॥ २ ॥

च = और (हे हर!) **तव** = आपकी, **महिमा** = महिमा (ऐश्वर्यादि), **वाङ्मनसयोः** = वाणी और मन के, **पन्थानम्** = मार्ग (गति) से, **अतीतः** = परे है (क्योंकि), **यम्** = जिस निर्गुण या अनन्त गुणयुक्त आपके ऐश्वर्यादि को, **अतद्व्यावृत्त्या** = ब्रह्मभिन्न निखिल प्रपञ्च के निषेध द्वारा, **श्रुतिः-अपि** = वेद भी, **चकितम्** = भय और विस्मय से युक्त हुआ, **अभिधत्ते** = कहता है। **सः** = निर्गुण या सगुण सदाशिव, **कस्य स्तोतव्यः** = किसकी स्तुति का विषय हो सकता है? क्योंकि, **कतिविध-गुणः** = सगुण परमात्मा कितने (अनन्त) प्रकार के गुणवाला है (और निर्गुण), **तु** = किन्तु, **अर्वाचीने पदे** = भक्तों के ऊपर कृपा करके धारण किये गये आधुनिक सगुण साकार स्वरूप में, **कस्य मनः** = किसका मन, **न पतति** = प्रवृत्त नहीं होता? **न वचः** = (और किसकी वाणी परवश हुई स्तुति करने नहीं लग जाती है?

भावः–*यद्यपि निर्गुण परमात्मा वाणी का अविषय है तथा सगुण के अनन्त गुणों का वर्णन करना भी असम्भव है, तथापि भक्तों के ऊपर अनुग्रह कर धारण किये गये सगुण विग्रह को देखकर जीवन्मुक्त से लेकर पामर तक के मन और वाणी उसमें तन्मय हो ही जाते हैं॥ २ ॥*

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथन! बुद्धिर्व्यवसिता॥ ३ ॥

पदच्छेदः– मधुस्फीताः, वाचः, परमम्, अमृतम्, निर्मितवतः, तव, ब्रह्मन्, किम्, वाग्, अपि, सुरगुरोः, विस्मय-पदम्, मम, तु, एताम्, वाणीम्, गुणकथनपुण्येन, भवतः, पुनामि, इति, अर्थे, अस्मिन्, पुरमथन, बुद्धि, व्यवसिता॥ ३ ॥

ब्रह्मन् = हे ब्रह्म स्वरूप महादेव! **मधुस्फीताः** = शहद से सनी हुई (अत्यन्त सुमधुर), **परमम्** = सर्वोत्कृष्ट, **अमृतम्** = अमृतमय, **वाचः** = वेदवाणी के, **निर्मितवतः** = निर्माण करने वाले, **तव** = आप (सर्वज्ञ जगन्नियन्ता) को, **किं सुरगुरोः** = क्या देवगुरु बृहस्पति की, **वाग्-अपि** = वाणी भी, **विस्मयपदम्** = आश्चर्य में डाल सकती है? (अर्थात् नहीं, फिर हमारे जैसों की क्या गिनती है)। **तु** = किन्तु (फिर भी) **पुरमथन!** = हे त्रिपुर नाशक! **भवतः** = आप जगन्नियन्ता के, **गुणकथनपुण्येन** = गुणानुवाद से उत्पन्न पुण्य के द्वारा, **एताम्** = (संसार की चर्चा से दूषित अपनी) इस, **वाणीम्** = वाणी को, **पुनामि** = पवित्र कर डालूँ, **इति** = इसीलिये, **अस्मिन्** = (आप के गुणानुवादरूप) इस, **अर्थे** = पवित्र कार्य में, **मम बुद्धिः** = मेरी बुद्धि, **व्यवसिता** = तत्पर हो जुट गयी है।

__भावः__–हमारी प्रार्थना का प्रयोजन परमेश्वर को बहलाना नहीं है, किन्तु अपनी अपवित्र वाणी को पवित्र बनाना मात्र प्रयोजन है॥ ३ ॥

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः॥ ४ ॥

पदच्छेदः– तव, ऐश्वर्यम्, यत्, तत्, जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्, त्रयीवस्तु, व्यस्तम्, तिसृषु, गुणभिन्नासु, तनुषु। अभव्यानाम्, अस्मिन्, वरद, रमणीयाम्, अरमणीम्, विहन्तुम्, व्याक्रोशीम्, विदधते, इह, एके, जडधियः॥ ४ ॥

वरद! = हे अभीष्ट फल को देने वाले शम्भो! **जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्** = जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करने वाला, **त्रयीवस्तु** = तीनों वेदों के प्रतिपाद्यवस्तु, **गुणभिन्नासु** = सत्त्वादिगुणों के भेद से भिन्न-भिन्न, **तिसृषु** = ब्रह्मादि तीनों, **तनुषु** = प्रसिद्ध देहों में, **व्यस्तम्** = विभक्त हुआ, **यत् तव** = जो आपका, **ऐश्वर्यम्** = माहात्म्य है। तद्-**विहन्तुम्** = उसे खण्डन करने के लिए, **इह** = इस लोक में, **एके जडधियः** = कुछ एक जड़ बुद्धि वाले (नास्तिक लोग वस्तुतः), **अरमणीम्** = बुरी होती हुई भी, **अभव्यानाम्** = हतभाग्य लोगों को, **रमणीयाम्** = अच्छी लगने वाली, **व्याक्रोशीम्** = कपोल कल्पित बातें, **अस्मिन्** = आप के ऐश्वर्य के विषय में, **विदधते** = किया करते हैं।

भावः–*प्रत्यक्ष, अनुमान तथा आगमादि प्रमाणों से सिद्ध भी आप के अपरिमित ऐश्वर्य को खण्डन करने के लिए नास्तिक लोग वितण्डावाद का आश्रय लेकर असफल प्रयत्न करते हैं॥ ४ ॥*

अब नास्तिकों के व्याक्रोश को दिखलाते हैं–

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः॥ ५ ॥

पदच्छेदः– किमीहः, किंकायः, सः, खलु, किमुपायः, त्रिभुवनम्ः, किमाधारः, धाता, सृजति, किमुपादानः, इति, च। अतर्क्यैश्वर्ये, त्वयि, अनवसरदुःस्थः, हतधियः, कुतर्कः, अयम्, कांश्चित्, मुखरयति, मोहाय, जगतः॥ ५ ॥

सः खलु = जगत् रचना के समय वह, **धाता** = विधाता, **किमीहः** = किस इच्छा वाला हो, **किंकायः** = कैसा शरीर धारण कर, **किमाधारः** = किस आधार पर, **किमुपायः** = किन साधनों (हथकण्डों) से, **च किमुपादानः** = और किन उपादन कारणों से, **त्रिभुवनम्** = तीनों लोकों को, **सृजति** = बनाता है। **इति** = इस प्रकार, **अयं कुतर्कः** = यह कुतर्क, **अतर्क्यैश्वर्ये** = तर्क से अगम्य ऐश्वर्य वाले, **त्वयि** = आपके सम्बन्ध में, **अनवसरदुःस्थः** = अवसर प्राप्त न करने के कारण अनर्गल होता हुआ भी, **कांश्चित्-हतधियः जगतः** = कुछ एक नष्ट बुद्धि वाले नास्तिक जनसमूह को, **व्यामोहाय** = व्यामोह में डालने के लिए, **मुखरयति** = वाचाल बना देता है।

__भावः__–लोक में शरीर के बिना कहीं भी चेष्टा नहीं देखी जाती। सृष्टि से पहले न तो परमेश्वर का देह था और न सृष्टि के अन्य कारण ही थे, फिर भला परमेश्वर जगत् का स्रष्टा कैसे हो सकता है? नास्तिकों के इस आक्षेप का उत्तर यह है कि अचिन्त्य माया शक्ति सम्पन्न परमेश्वर को जगत् सृष्टि के लिए लोकवत् देहादि कारण सामग्री की आवश्यकता नहीं होती। अतः नास्तिकों का आक्षेप अनवसर गीत है॥ ५ ॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे॥ ६ ॥

पदच्छेदः— अजन्मानः, लोकाः, किम्, अवयववन्तः, अपि, जगताम्, अधिष्ठातारम्, किम्, भवविधिः, अनादृत्य, भवति। अनीशः, वा, कुर्याद्, भुवनजनने, कः, परिकरः, यतः, मन्दाः, त्वाम्, प्रति, अमरवर, संशेरते, इमे॥ ६ ॥

अमरवर! = हे देवों में श्रेष्ठ महादेव! **अवयववन्तः** = अवयव वाले होते हुए, **अपि लोकाः** = भी पृथिव्यादि लोक, **किम्-अजन्मानः** = क्या उत्पत्ति रहित हो सकते हैं? अर्थात् नहीं हो सकते। **अधिष्ठातारम्** = कर्ता को, **अनादृत्य** = न मानने पर, **किं जगताम्** = क्या सम्पूर्ण जगत् का, **भवविधिः** = जन्मादि, **भवति** = हो सकता है? अर्थात् नहीं हो सकता है। **वा** = अथवा (ईश्वर से भिन्न जीवादि के पास) **भुवनजनने** = चौदह भुवनों की सृष्टि के लिए, **कः परिकरः** = क्या साधन सामग्री है, जिससे कि, **अनीशः** = अनीश्वर जीव (संसार की), **कुर्यात्** = रचना कर सके? (फिर भला), **यतः** = क्यों कर, **त्वां प्रति** = आपके विषय में, **इमे मन्दाः** = ये मन्द भाग्य नास्तिक लोग, **संशेरते** = संशय करते रहते हैं।

भावः—*न तो सावयव जगत् अजन्मा हो सकता है, न कर्ता के बिना ही यह बन सकता है और न परमेश्वर से भिन्न अल्पज्ञ जीव संसार को बना सकता है। इस प्रकार सब प्रमाण से सिद्ध परमेश्वर के विषय में, हत-भाग्य नास्तिकों को संशय होता ही रहता है॥६॥*

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥ ७ ॥

पदच्छेदः– त्रयी, सांख्यम्, योगः, पशुपतिमतम्, वैष्णवम्, इति, प्रभिन्ने, प्रस्थाने, परम्, इदम्, अदः, पथ्यम्, इति, च। रुचीनाम्, वैचित्र्याद्, ऋजुकुटिलनानापथजुषाम्, नृणाम्, एकः, गम्यः, त्वम्, असि, पयसाम्, अर्णवः, इव॥ ७ ॥

त्रयी = सभी वेद (एवं तदनुसारी आगम), **सांख्यम्** = (कपिल रचित) सांख्य दर्शन, **योगः** = पातञ्जलयोग शास्त्र, **पशुपतिमतम्** = पाशुपत शास्त्र (शैव सिद्धान्त), **वैष्णवम्** = पाञ्चरात्रादि वैष्णव मत, **इति प्रभिन्ने** = इत्यादि भिन्न-भिन्न, **प्रस्थाने** = मतमतान्तरों में, **इदम् परम्** = यह हमारा मत (साधन दृष्टि से कठिन होता हुआ भी) श्रेष्ठ है। **च-अदःपथ्यम्** = और वह साधनों में सरल होता हुआ (भी मोक्ष प्रद नहीं है)। **इति रुचीनाम्** = इस प्रकार इच्छाओं की, **वैचित्र्यात्** = विचित्रता से, **ऋजुकुटिल-नानापथजुषाम्** = सीधे टेढ़े अनेक मार्गों से चलने वाले, **नृणाम्** = मनुष्यों के लिये, **पयसाम्** = गङ्गादि नाना नदियों का, **अर्णवः-इव** = समुद्र जैसे (गन्तव्य है वैसे ही), **एकः त्वम्** = एकमात्र आप ही, **गम्यः-असि** = गन्तव्य यानी गति हो।

भावः–उक्त मार्गों में से कोई साक्षात् और कोई परम्परा से मोक्ष का साधन है। अन्त में आपको प्राप्त करके ही परमशान्ति का लाभ मिल सकता है॥ ७ ॥

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति॥ ८ ॥

पदच्छेदः— महोक्षः, खट्वाङ्गम्, परशुः, अजिनम्, भस्म, फणिनः, कपालम्, च, इति इयत्, तव, वरद, तन्त्रोपकरणम्। सुराः, ताम्, ताम्, ऋद्धिम्, दधति, तु, भवद्भ्रू, प्रणिहिताम्, न, हि, स्वात्मारामम्, विषयमृगतृष्णा, भ्रमयति॥ ८ ॥

वरद = हे वरदान देनेवाले भोले भण्डारी! **महोक्षः** = बूढ़ा बैल (सवारी के लिए) **खट्वाङ्गम्** = खाट का एक पाया (फर्नीचर के स्थान में) **परशुः** = कुल्हाड़ा (शस्त्र की जगह) **अजिनम्** = मृगचर्म (पहनने के लिए) **भस्म** = विभूति (उबटन की जगह) **फणिनः** = सर्प (आभूषण के लिए) **च कपालम्** = और मनुष्य की खोपड़ी, **इति-इयत्** = बस इतने ही, **तव** = आपके पास, **तन्त्रोपकरणम्** = शरीर निर्वाह या परिवार पोषण के लिए साधन हैं, **तु** = किन्तु, **सुराः** = इन्द्रादि देव, वा पुण्यात्मा जीव, **भवद्भ्रूप्रणिहिताम्** = आपके कृपा कटाक्ष से दिये हुए, **ताम् ताम्** = उस उस अलौकिक, **ऋद्धिम्** = दिव्य ऐश्वर्य को, **दधति** = भोग रहे हैं। (फिर भी वे ऐश्वर्य आपको भोग लम्पट नहीं बना सकते), **हि** = क्योंकि, **स्वात्मारामम्** = अपने स्वरूप में रमण करने वाले को, **विषयमृगतृष्णा** = भोग्य वस्तु की मृगतृष्णिका, **न भ्रमयति** = मोह में नहीं फंसा सकती है।

भावः—*जब तत्त्वनिष्ठ जीव को भी विषय मृगतृष्णा मोहित नहीं करती है, तो नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वभाव सदाशिव को यह कैसे भ्रान्त कर सकेगी॥ ८ ॥*

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्लेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता॥ ६ ॥

पदच्छेदः– ध्रुवम्, कश्चित्, सर्वम्, सकलम्, अपरः, तु, अध्रुवम्, इदम्, परः, ध्रौव्याध्रौव्ये, जगति, गदति, व्यस्तविषये। समस्ते, अपि, एतस्मिन्, पुरमथन, तैः, विस्मितः, इव, स्तुवन्, जिह्लेमि, त्वाम्, न, खलु, ननु, धृष्टा, मुखरता॥ ६ ॥

पुरमथन = हे त्रिपुरारे! **कश्चित्** = कोई एक सत्कार्यवादी सांख्यादि, **इदं सर्वम्** = सम्पूर्ण जगत् को, **ध्रुवम्** = आदि अन्त रहित, **गदति** = कहता है, **तु-अपरः** = किन्तु दूसरा असत्कार्यवादी बौद्धादि, **सकलम्** = समस्त जगत् को, **अध्रुवम्** = प्रतिक्षण विनाशी (बतलाता है। वैसे ही) **परः** = अन्य, **जगति व्यस्तविषये** = सम्पूर्ण संसार के भिन्न-भिन्न विषय में, **ध्रौव्याध्रौव्ये** = नित्यत्व और अनित्यत्व को कहता है (किन्तु) **एतस्मिन्** = पूर्वोक्त इन, **समस्ते** = सम्पूर्ण मतवादों में, **विस्मितः इव-अपि** = आश्चर्य चकित के जैसे होता हुआ भी, **तैः त्वाम्** = उन्हीं वादों के द्वारा आपकी, **स्तुवन्** = स्तुति करता (मैं), **न जिह्लेमि** = नहीं लजाता हूँ, **खलु मुखरता** = निश्चय ही वाचालता, **ननु धृष्टा** = अत्यन्त ढीठ होती है।

भावः– *अत्यन्त ढीठ वाचालता ने मुझे भी ढीठ बना रखा है। अतः परस्पर विरुद्ध मत-मतान्तरों की ओर ध्यान न देकर निर्लज्ज की भाँति मैं बकता जा रहा हूँ। कृपया आप इसे क्षमा कर देवें॥ ६ ॥*

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति॥ १० ॥

पदच्छेदः– तव, ऐश्वर्यम् यत्नाद्, यत्, उपरि, विरञ्चिः, हरिः, अधः, परिच्छेत्तुम्, यातौ, अनलम्, अनलस्कन्धवपुषः। ततः, भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्याम्, गिरिश, यत्, स्वयं, तस्थे, ताभ्याम्, तव, किम्, अनुवृत्तिः, न, फलति॥ १० ॥

गिरिश ! = हे हिमालय में समाधिस्थ शंकर! **अनलस्कन्ध-वपुषः तव** = तेजःपुञ्ज के समान ज्योतिर्मय आकृति वाले आप के, **ऐश्वर्यं यत्** = ऐश्वर्य का जब, **परिच्छेत्तुम्** = अन्त जानने के लिए, **यत्नाद्-उपरि** = यत्न पूर्वक ऊपर, **विरञ्चि** = लोक पितामह ब्रह्मा और, **अधः हरिः** = नीचे विष्णु, **यातौ** = (सामर्थ्य के अनुसार) गये, **अनलम्** = किन्तु वे अन्त न पा सके। **ततः** = उसके बाद, **भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्याम्** = भक्ति श्रद्धा से परिपूर्ण हो अतिशय प्रार्थना करने वाले, **ताभ्याम्** = उन दोनों के सामने, **यत्** = जो, **स्वयम्** = स्वयं ही आप, **तस्थे** = प्रकट हो गये (एवं अपने ऐश्वर्य का बोध करा दिया)। हे प्रभो! **तव अनुवृत्तिः** = (शरणागतों से की गयी) आपकी सेवा, **किं न फलति** = क्या फल नहीं देती है? अर्थात् अवश्य देती है।

भावः– *अभिमान पूर्वक प्रयत्न से परमेश्वर की महिमा को कोई जान नहीं सकता, किन्तु अभिमान परित्याग कर जब अनन्यभाव से शरण में आ जाता है तो कृपाकर अपनी महिमा के सहित स्वरूप को आप स्वयं ही दिखला देते हो॥ १० ॥*

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान्।
शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्॥ ११ ॥

पदच्छेदः— अयत्नाद्, आपाद्य, त्रिभुवनम्, अवैरव्यतिकरम्, दशास्यः, यत्, बाहून्, अभृत, रणकण्डूपरवशान्। शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः, स्थिरायाः, त्वद्भक्तेः, त्रिपुरहर, विस्फूर्जितम्, इदम्॥ ११ ॥

त्रिपुरहर! = हे त्रिपुरासुर के नाशक! **दशास्यः यत्** = रावण ने जो, **अयत्नाद्** = अनायास ही, **त्रिभुवनम्** = भूरादि तीनों लोकों को, **अवैरव्यतिकरम् आपाद्य** = शत्रुहीन निष्कण्टक बनाकर (प्रतिभट के अभाव में), **रणकण्डूपरवशान् बाहून् अभृत** = युद्ध की खुजलाहट के वशीभूत बीस भुजाओं को धारण किया था। **इदम्** = यह तो, **शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः** = अपने मस्तक रूप कमल श्रेणी को काटकर चढ़ाये गये आप के पाद पद्मों में भेंट के फलस्वरूप, **स्थिरायाः त्वद्भक्तेः** = दृढ़ हुई आपके प्रति रावण की भक्ति का ही, **इदं विस्फूर्जितम्** = यह प्रभाव था।

भावः— *रावण ने जो तीनों भुवनों को शत्रुहीन कर दिया था और प्रतियोद्धा न मिलने के कारण उसके हाथों में लड़ने की खुजलाहट सदा बनी ही रहती थी। यह तो आपके चरणों में अपने को कुर्बानी कर देने से सुदृढ़ हुई शिवभक्ति का ही प्रभाव था, किसी अन्य का नहीं॥ ११ ॥*

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयत:।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि,
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खल:॥१२॥

पदच्छेद:– अमुष्य, त्वत्सेवासमधिगतसारम्, भुजवनम्, बलात्, कैलासे, अपि, त्वदधिवसतौ, विक्रमयत:, अलभ्या, पाताले, अपि, अलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि, प्रतिष्ठा, त्वयि, आसीत्, ध्रुवम्, उपचित:, मुह्यति, खल:॥ १२ ॥

त्वत्सेवासमधिगतसारम् = आपकी सेवा से ही प्राप्त अतुलबल वाले, **भुजवनम्** = अनेकों हाथों को, **त्वदधिवसतौ** = आपके निवास स्थान, **कैलासेअपि** = कैलासपर्वत पर भी, **बलात्** = हठ पूर्वक, **विक्रमयत:** = अजमाने वाले, **अमुष्य** = उस रावण को, **त्वयि-अलस-चलिताङ्गुष्ठ-शिरसि** = आपके अलसाते हुए पैर के अँगूठे के अग्रभाग मात्र हिल जाने से, **पाताले अपि** = पाताल में भी, **प्रतिष्ठा** = स्थिति, **अलभ्या** = न प्राप्त हो सकी, **आसीत्** = थी। (ठीक ही है) **उपचित:** = ऐश्वर्य युक्त हो, **खल:** = दुष्ट (कृतघ्न) पुरुष, **ध्रुवम्** = अवश्यमेव, **मुह्यति** = मोह में पड़ जाता है॥ १२ ॥

***भाव:**–शिवजी की कृपा से प्राप्त अतुलबल वाले अपने बीस भुजाओं के पराक्रम को आपके निवास स्थान कैलास पर्वत पर ही रावण ने दिखलाना चाहा था। उस समय भयभीत हुई पार्वती की प्रार्थना से भगवान् शंकर ने पैर के अँगूठे के अग्रभाग से पर्वत को धीरे से दबाया। बस! इतने मात्र से शक्तिक्षीण रावण को पाताल में भी आश्रय न मिल सका था, पुन: आपने दया करके उसका उद्धार किया था॥ १२ ॥*

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयस्त्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः॥ १३ ॥

पदच्छेदः– यत्, ऋद्धिम्, सुत्राम्णः, वरद, परमोच्चैः, अपि, सतीम्, अधः, चक्रे, बाणः, परिजनविधेयः, त्रिभुवनः। न, तत्, चित्रम्, तस्मिन्, वरिवसितरि, त्वच्चरणयोः, न, कस्यै, उन्नत्यै, भवति, शिरसः, त्वयि, अवनतिः॥ १३ ॥

वरद! = हे अभीष्ट वर देने वाले, **परिजनविधेयः त्रिभुवनः** = तीनों भुवनों को दास जैसे बना लेने वाले, **बाणः यत्** = बाणासुर ने जो, **परमोच्चैः** = अत्यन्त बढ़ी-चढ़ी, **सतीम्-अपि** = हुई भी, **सुत्राम्णः** = देवराज इन्द्र की, **ऋद्धिम्** = सम्पत्ति को (अपनी संपत्ति से) **अधः चक्रे** = नीचे कर दिया था। **तत्** = वह, **त्वच्चरणयोः** = आपके चरणों में, **वरिवसितरि** = सेवाभाव से अधीन हुए, **तस्मिन्** = उस बाणासुर के लिए, **न चित्रम्** = आश्चर्यमय नहीं था। (क्योंकि) **त्वयि** = आपके समक्ष, **शिरसः** = मस्तक को, **अवनतिः** = झुकाना, **कस्यै उन्नत्यै न भवति** = किस उन्नति के लिए नहीं होता? अर्थात् सभी प्रकार की उन्नति का कारण होता है॥ १३ ॥

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः॥१४॥

पदच्छेदः– अकाण्ड-ब्रह्माण्ड-क्षय-चकितदेवासुरकृपाविधेयस्य, आसीत्, यः, त्रिनयन, विषम्, संहृतवतः। सः, कल्माषः, कण्ठे, तव, न, कुरुते, न, श्रियम्, अहो, विकारः, अपि, श्लाघ्यः, भुवनभयभङ्गव्यसनिनः॥ १४ ॥

त्रिनयन! = हे सूर्य, चन्द्र और अग्निनेत्र वाले! **अकाण्डब्रह्माण्ड-क्षयचकितदेवासुरकृपाविधेयस्य** = असमय ब्रह्माण्ड के नाश की सम्भावना से डरे हुए देव-दानव पर कृपा परवश हो, **विषम्** = हलाहल विष को, **संहृतवतः** = पान करने वाले, **तव कण्ठे** = आपके कण्ठ में, **यः कल्माषः** = जो काला दाग पड़ गया, **आसीत्** = था, **सः श्रियम्** = वह (आपकी) शोभा को, **न कुरुते न** = नहीं बढ़ाती है ऐसी बात नहीं, किन्तु बढ़ाती ही है। **अहो** = ठीक ही है, **भुवन-भयभङ्ग-व्यसनिनः** = ब्रह्माण्ड के भय को नाश करने के स्वभाव वाले का, **विकारः अपि** = विकार भी, **श्लाघ्यः** = प्रशंसनीय हो जाता है।

भावः–*तीनों लोकों को बचाने में संलग्न भगवान् शंकर के गले में हलाहल विषपानजन्य कालिमा उनकी शोभा को बढ़ाती है और इसीलिये उनका नीलकण्ठ भी नाम पड़ गया, जो प्रशंसा का सूचक है॥ १४ ॥*

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभू-
त्स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः॥ १५ ॥

पदच्छेदः– असिद्धार्थाः, न, एव, क्वचित्, अपि, सदेवासुरनरे, निवर्तन्ते, नित्यम्, जगति, जयिनः, यस्य, विशिखाः, सः, पश्यन्, ईश, त्वाम्, इतरसुरसाधारणम्, अभूत्, स्मरः, स्मर्तव्यात्मा, न हि, वशिषु, पथ्यः, परिभवः॥ १५ ॥

ईश! = हे सर्वेश्वर! **यस्य जयिनः** = जिस विश्वविजयी काम के, **विशिखाः** = तीक्ष्ण बाण, **सदेवासुरनरे जगति** = देव, दानव तथा मानव के सहित विश्व भर में, **क्वचिद्-अपि** = कहीं से भी, **नित्यम्** = सदा सर्वदा, **असिद्धार्थाः** = कार्य सिद्ध किये बिना, **न-एव निवर्तन्ते** = नहीं लौटते अर्थात् कार्य सिद्ध करके ही लौटते हैं। **सः स्मरः** = वही कामदेव, **इतरसुरसाधारणम्** = अन्य देवों के समान ही, **त्वाम् पश्यन्** = आपको भी देखता हुआ, **स्मर्तव्यात्मा** = केवल स्मृति का विषय, **अभूत्** = ही रह गया था, यानी नष्ट हो गया। **हि** = क्योंकि (ठीक ही कहा है कि) **वशिषु** = शरीरादि को वश रखने वालों के प्रति किया, **परिभवः** = अनादर, **पथ्यः न** = हितकर नहीं होता।

भावः–*जब जितेन्द्रिय किसी भी पुरुष का अनादर हितकर नहीं होता, तो जितेन्द्रियों के मुकुटमणि आपका तिरस्कार कर कोई अपना कल्याण कैसे कर सकता है॥ १५ ॥*

महीपादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता॥ १६ ॥

पदच्छेदः– मही, पादाघाताद्, व्रजति, सहसा, संशयपदम्, पदम्, विष्णोः, भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्। मुहुः, द्यौः, दौस्थ्यम्, याति, अनिभृत-जटा-ताडिततटा, जगद्रक्षायै, त्वम्, नटसि, ननु, वामा, एव, विभुता॥ १६ ॥

पादाघाताद् = आपके पद की चोट से, **मही सहसा** = यह पृथिवी अचानक, **संशयपदम्** = संदिग्ध स्थिति को, **व्रजति** = प्राप्त हो जाती है। **विष्णोः** = भगवान् विष्णु का, **पदम्** = लोक अन्तरिक्ष भी, **भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्** = घुमाते हुए परिघाकार भुजाओं की थपेड़ों से टूटते हुए नक्षत्रों वाला (संदिग्ध ही हो जाता है)। **अनिभृतजटाताडिततटा** = खुली हुई जटा की चोट से ताडित किनारी वाला, **द्यौः मुहुः** = स्वर्ग भी बारम्वार, **दौस्थ्यम्** = दुरवस्था को, **याति** = प्राप्त हो जाता है। (इस प्रकार), **जगद्रक्षायै** = जगत् की रक्षा के लिए, **त्वम् नटसि** = आप ताण्डव नृत्य करते हैं। ननु = पर आश्चर्य है, **विभुता** = परमेश्वर की व्यापकता (कभी-कभी), **वामा-एव** = प्रतिकूल ही हो जाती है।

***भावः**–सन्ध्याकाल में विश्वविध्वंसक राक्षसों को मोहित कर जगद्रक्षा के लिए जब आप ताण्डव नृत्य करते हैं, तब आपकी व्यापकता लोक में विपरीत परिस्थिति को पैदा कर देती है॥ १६॥*

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः॥ १७ ॥

पदच्छेदः– वियद्व्यापी, तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः, प्रवाहः, वाराम्, यः, पृषतलघुदृष्टः, शिरसि, ते। जगद्, द्वीपाकारम्, जलधिवलयम्, तेन, कृतम्, इति, अनेन, एव, उन्नेयम्, धृतमहिम, दिव्यम्, तव, वपुः॥ १७ ॥

वियद्व्यापी = संपूर्ण आकाश में व्याप्त, **तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः** = तारागणों के प्रतिबिम्ब से बढ़ी हुई फेन कान्तिवाला, **यः वारां प्रवाहः** = जो गंगा जल का प्रभाव, **ते शिरसि** = आपके मस्तक पर, **पृषतलघुदृष्टः** = बिन्दु के छोटे-छोटे कण के समान देखा गया। **तेन** = उसी जल बिन्दु से, **जलधिवलयम्** = समुद्ररूप वलय वाला, **द्वीपाकारम्** = द्वीपाकार युक्त, **जगत् कृतम्** = जगत् को कर दिया। **अनेन-एव** = बस इसी से, **तव वपुः** = आपका शरीर, **दिव्यम्** = दिव्य एवं, **धृतमहिम** = महिमा को धारण करने वाला है, **इति-उन्नेयम्** = ऐसा अनुमान कर लेना चाहिये।

भावः–*अगस्त्य के द्वारा समुद्र को पी जाने पर महती खाई को भगीरथ ने गंगा जल से भरा था। जो गंगा जल गंगावतरण के समय शंकर की जटा में छोटे-छोटे जल बिन्दु से दीख रहे थे। उन्हीं जल कणों ने स्वर्ग, पाताल तथा पृथिवी में भी जलधिरूप वलय से युक्त द्वीपाकार जगत् को बना दिया। बस इतने मात्र से आपकी महिमा का अनुमान लगाया जा सकता है॥ १७ ॥*

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः॥१८॥

पदच्छेदः– रथः, क्षोणी, यन्ता, शतधृतिः, अगेन्द्रः, धनुः, अथः, रथाङ्गे, चन्द्राकौं, रथचरणपाणिः, शरः, इति। दिधक्षोः, ते, कः, अयम्, त्रिपुरतृणम्, आडम्बर-विधिः, विधेयैः, क्रीडन्त्यः, न खलु, परतन्त्राः, प्रभुधियः॥ १८ ॥

क्षोणी रथः = पृथिवी को रथ, **शतधृतिः यन्ता** = ब्रह्मा को रथ वाहक, **अगेन्द्रःधनुः** = सुमेरु को धनुष, **चन्द्रार्कौ रथाङ्गे** = सूर्य-चन्द्र को रथ के चक्के, **अथः** = और **रथचरणपाणिः** = चक्रपाणि विष्णु को, **शरः इति** = बाण (बनाया इस प्रकार) **त्रिपुरतृणम्** = त्रिपुरासुररूप तिनके को, **दिधक्षोः ते** = जलाने की इच्छा वाले आपको, **अयं कः** = यह क्या, **आडम्बरविधिः** = आडम्बर रचना (आवश्यक थी?) अर्थात् नहीं। **खलु** = निश्चय ही, **विधेयैः** = स्वाधीन दासों के साथ, **क्रीडन्त्यः** = खेल खेलने वाले, **प्रभुधियः** = परमेश्वर के संकल्प, **परतन्त्राः न** = पराधीन नहीं होते।

भावः–शुष्कतृण के समान त्रिपुरासुर को मारने के लिए आपका उक्त आडम्बर, मच्छर को मारने के लिए एटमबम तैयारी के समान ही है, क्योंकि आपके तो भ्रूवक्रता मात्र से उसका नाश होना सुनिश्चित था॥ १८ ॥

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम्।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम्॥ १९ ॥

पदच्छेदः— हरिः, ते, साहस्रम्, कमलबलिम्, आधाय, पदयोः, यत्, एकोने, तस्मिन्, निजम्, उदहरत्, नेत्रकमलम्। गतः, भक्त्युद्रेकः, परिणतिम्, असौ, चक्रवपुषा, त्रयाणाम्, रक्षायै, त्रिपुरहर, जागर्ति, जगताम्॥ १९ ॥

त्रिपुरहर! = हे त्रिपुरनाशक! **हरिः** = भगवान् विष्णु ने, **ते पदयोः** = आपके चरणों में, **साहस्रम्** = एक हजार (प्रतिदिन), **कमलबलिम्** = कमल पुष्पों की भेंट, **आधाय** = समर्पित कर (एक दिन), **तस्मिन्** = उस नियमित उपहार में, **एकोने** = (प्रेम परीक्षणार्थ) एक कम हो जाने पर, **यद् निजम्** = जो आपने अपने, **नेत्रकमलम्** = कमल के समान नेत्र को, **उदहरत्** = उखाड़कर चढ़ा दिया था। **असौ** = वही (आपके प्रति उनकी) **भक्त्युद्रेकः** = भक्ति का आवेग, **चक्रवपुषा** = सुदर्शनचक्र रूप से, **परिणतिम्** = परिणाम को, **गतः** = प्राप्त हो गया, **त्रयाणाम्** = (और आज भी) तीनों, **जगताम्** = लोकों की, **रक्षायै** = रक्षा के लिए वह, **जागर्ति** = सावधान है।

भावः—भगवान् शंकर ने विष्णु की अपने प्रति दृढ़ भक्ति की परीक्षा के लिए एक कमल पुष्प कम कर दिया था। अपने नियमित कमल पुष्प के उपहार में एक कम देखकर विष्णु भगवान् ने कमल के सदृश अपने नेत्र को ही उखाड़कर शंकर के चरणों में समर्पित कर दिया। फलतः विष्णु भगवान् के हाथ में वही नेत्रकमल सुदर्शनचक्र बनकर तीनों लोकों की आज भी रक्षा कर रहा है॥ १९ ॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः॥ २० ॥

पदच्छेदः— क्रतौ, सुप्ते, जाग्रत्, त्वम्, असि, फलयोगे, क्रतुमताम्, क्व, कर्म, प्रध्वस्तम्, फलति, पुरुषाराधनम्, ऋते। अतः, त्वाम्, सम्प्रेक्ष्य, क्रतुषु, फलदानप्रतिभुवम्, श्रुतौ, श्रद्धाम्, बध्वा, दृढपरिकरः, कर्मसु, जनः॥ २० ॥

क्रतुमताम् = यागादि सत्कर्म करने वाले के, **क्रतौ सुप्ते** = क्रिया रूप यागादि के समाप्त होने पर, **फलयोगे** = फल के साथ सम्बन्ध करने के लिए, **त्वं जाग्रद् असि** = आप सदा जागते रहते हैं। **प्रध्वस्तम्** = (क्योंकि) सर्वथा नष्ट हुआ, **कर्म** = केवल जड़ यागादि कर्म, **पुरुषाराधनम्-ऋते** = चेतन परमात्मा की आराधना के विना (कालान्तर भावी), **क्व फलति** = कहीं पर फल देता है? अर्थात् नहीं देता। **अतः** = अतएव, **क्रतुषु** = यागादि सत्कर्मों में, **फलदानप्रतिभुवम्** = फल देने के लिए जमानती रूप से, **त्वाम्** = आपको ही, **सम्प्रेक्ष्य** = अच्छी प्रकार जानकर, **श्रुतौ** = वेदादि सच्छास्त्रों में, **श्रद्धां बध्वा** = पूर्ण विश्वास रखकर, **क्रतुषु** = विहित कर्मों में, **जनः** = अधिकारी पुरुष, **दृढपरिकरः** = दृढ़ता पूर्वक तत्पर हो जाता है।

भावः—*कर्म स्वतंत्र ही फल दे सकता है, फिर भला ईश्वर की क्या आवश्यकता है। मीमांसकों के इस मत का खण्डन करते हुए कहा है कि यागादि कर्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। ऐसी दशा में यजमान को कालान्तर में उनका फल कैसे मिल सकेगा। जैसे नष्ट दण्ड और मृत कुलाल से घट उत्पन्न नहीं होता है, वैसे ही नष्ट कर्म कैसे फल पैदा कर सकेगा। इसीलिये चेतन परमात्मा को ही कालान्तर भावी फल के देने में साक्षी समझ कर यजमान वेद वचनों में विश्वास कर दृढ़ता के साथ वेदोक्त कर्मों में लग जाता है क्योंकि विहित कर्म से प्रसन्न हो शंकर ही उसे फल देते हैं॥ २० ॥*

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः॥ २१ ॥

पदच्छेदः– क्रियादक्षः, दक्षः, क्रतुपतिः, अधीशः, तनुभृताम्, ऋषीणाम्, आर्त्त्विज्यम्, शरणद, सदस्याः, सुरगणाः। क्रतुभ्रंशः, त्वत्तः, क्रतुफलविधान-व्यसनिनः, ध्रुवम्, कर्तुः, श्रद्धाविधुरम्, अभिचाराय, हि, मखाः॥ २१ ॥

शरणद! = (अनाश्रितों को भी) आश्रय देने वाले, **क्रियादक्षः** = यागादि क्रियाओं के अनुष्ठान में अत्यन्त कुशल, **तनुभृताम्** = देहधारी प्रजाओं का, **अधीशः** = स्वामी, **दक्षः** = प्रजापति स्वयं, **क्रतुपतिः** = यज्ञकर्ता यजमान था। **ऋषीणाम्** = त्रिकालदर्शी भृगु आदि ऋषिगण, **आर्त्त्विज्यम्** = यागानुष्ठान करने वाले पुरोहित थे, **सुरगणाः** = सभी ब्रह्मादिदेव, **सदस्याः** = वहाँ के सदस्य या दर्शक थे, (इतने पर भी) **क्रतुफलविधानव्यसनिनः** = यागादि कर्म फल विधान करने के अभ्यासी, **त्वत्तः** = आप से ही अर्थात् आपकी अप्रसन्नता से ही, **क्रतुभ्रंशः** = दक्ष यज्ञ का विध्वंस हो गया (क्योंकि) **श्रद्धाविधुरम्** = श्रद्धा के बिना (अनुष्ठान किये गये), **मखाः** = यागादि कर्म भी, **ध्रुवम्** = निःसन्देह, **कर्तुः** = यज्ञकर्ता यजमान के, **अभिचाराय हि** = नाश के लिए ही हुआ करते हैं।

__भावः__–संपूर्ण साधनों से युक्त होते हुए भी शंकर की कृपा के बिना यागादि कर्म अपना फल नहीं देते हैं, क्योंकि फल तो सदाशिव से ही मिलता है॥ २१ ॥

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः॥ २२ ॥

पदच्छेदः– प्रजानाथम्, नाथ, प्रसभम्, अभिकम्, स्वाम्, दुहितरम्, गतम्, रोहिद्भूताम्, रिरमयिषुम्, ऋष्यस्य, वपुषा। धनुष्पाणेः, यातम्, दिवम्, अपि, सपत्राकृतम्, अमुम्, त्रसन्तम् ते, अद्य, अपि, त्यजति, न, मृगव्याधरभसः॥ २२॥

नाथ ! = हे सर्वनियामक प्रभो ! **स्वां दुहितरम्** = अपनी सगी कन्या सन्ध्या के प्रति (रमण की इच्छा से), **प्रसभं गतम्** = जबरदस्ती गये, **अभिकम्** = कामाविष्ट, **प्रजानाथम्** = ब्रह्माजी को आपने ही पाठ पढ़ाया। (जब कन्या के साथ पिता का अनुचित व्यवहार समझ कर लज्जा से) **रोहिद्भूताम्** = मृगी का रूप धारण करने वाली के प्रति पुनः, **रिरमयिषुम्** = रति की इच्छा से, **ऋष्यस्य वपुषा** = मृग शरीर से (पीछे-पीछे दौड़ने वाले ब्रह्मा की खबर लेने के लिए) **मृगव्याधरभसः** = कुशल शिकारी की भाँति, **धनुष्पाणेः** = हाथ में धनुष लिये, **ते** = आपका (बाण), **सपत्राकृतम्** = विंधे एवं पीड़ित हो, **त्रसन्तम् दिवं** = डर कर (मृगशिरा नक्षत्र रूप से) अन्तरिक्ष में, **यातम्-अपि-अमुम्** = कूदे हुए उस ब्रह्मा को भी, **अद्य-अपि** = आज भी, **न त्यजति** = नहीं छोड़ता अर्थात् आज भी वह बाण नक्षत्र बनकर पीछा करता ही है।

__भावः__–त्रैलोक्य सुन्दरी सन्ध्यानामक अपनी कन्या के पीछे कामुक ब्रह्मा दौड़ा और बलात्कार करना चाहा। शास्त्र एवं लोक विरुद्ध पिता के इस व्यवहार से लजा के मारे जब सन्ध्या ने मृगी का रूप धारण कर लिया, तो ब्रह्मा ने मृग बनकर उससे रति करना चाहा। इस मर्यादा विरुद्ध व्यवहार को देख जब आप सर्वनियन्ता शंकर ने बाण छोड़ा तो, वह ब्रह्मा मृगशिरा नक्षत्र बनकर अन्तरिक्ष में कूद गया। डर कर मृगशिरा नक्षत्र के रूप में आकाश में घूमते हुए ब्रह्मा को आज भी शंकर जी का बाण आर्द्रा नक्षत्र बनकर पीछा कर रहा है। अतएव आज भी उक्त दोनों नक्षत्रों का सन्निधान विद्यमान है॥ २२ ॥

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणव-
त्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि।
यदि स्त्रैणं दैवी यमनिरत देहार्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः॥ २३ ॥

पदच्छेदः– स्वलावण्याशंसा, धृतधनुषम्, अह्नाय, तृणवत्, पुरः, प्लुष्टम्, दृष्ट्वा, पुरमथन, पुष्पायुधम्, अपि। यदि स्त्रैणम् देवी, यमनिरत, देहार्ध-घटनाद्, अवैति, त्वाम्, अद्धा, बत, वरद, मुग्धाः, युवतयः॥ २३ ॥

पुरमथन ! = हे त्रिपुरासुर के नाशक! **यमनिरत** ! = हे यमादि में निरत! **स्वलावण्याशंसा** = जगदम्बा पार्वती के सौन्दर्य द्वारा शिवजी को जीत लेने की आशा से, **धृतधनुषम्** = धनुषधारण करने वाले, **पुष्पायुधम्** = पुष्पधन्वा कामदेव को, **अह्नाय** = शीघ्र ही, **तृणवत्** = सूखे तिनके की भाँति, **पुरः प्लुष्टम्** = सामने जले हुए, **दृष्ट्वा अपि** = देखकर भी, **देहार्धघटनात्** = शिवके वामार्ध भाग में उमा को बैठाने के कारण, **यदि दैवी** = यदि पार्वती, **त्वां स्त्रैणम्** = आपको स्त्री लम्पट, **अवैति** = समझती है तो, **वरद!** = हे वरद! **अद्धा** = युक्त ही है, **बत** = क्योंकि प्रायः, **युवतयः** = स्त्रियाँ, **मुग्धाः** = बेसमझ होती हैं।

भावः–*स्त्रियों में भोलापन आभूषण माना गया है। अतः पार्वती जी भी उसे धारण कर अपने लोकातीत सौन्दर्य को बढ़ा रही हैं। अतएव अयुक्त को भी युक्त कह दिया गया है॥ २३ ॥*

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं,
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मङ्गलमसि॥ २४ ॥

पदच्छेदः– श्मशानेषु, आक्रीडा, स्मरहर, पिशाचाः, सहचराः, चिताभस्मालेपः, स्रग्, अपि, नृकरोटीपरिकरः। अमङ्गल्यम्, शीलम्, तव, भवतु नाम एवम्, अखिलम्, तथापि, स्मर्तृणाम्, वरद, परमम्, मङ्गलम्, असि॥ २४ ॥

स्मरहर! = हे कामनाशक! **श्मशानेषु** = श्मशानों में, **आक्रीडा** = सानन्द खेलना, **पिशाचाः** = भूत प्रेतादि, **सहचराः** = सदा साथी संगी, **चिताभस्मालेपः** = चिता में जले मुर्दों की राख पाउडर, **नृक-रोटीपरिकरःस्रग्** = मनुष्यों की खोपड़ियों की बनी माला तथा, **अपि** = गज चर्मादि वस्त्र, **एवम् तव** = इस प्रकार आपके, **अखिलम्** = सम्पूर्ण, **शीलम्** = व्यासङ्ग (चरित्र), **अमङ्गल्यम्** = अमंगल जनक, **भवतु नाम** = भले ही रहे, **तथापि** = फिर भी, **वरद** ! = हे वाञ्छित वर देने वाले शम्भो! **स्मर्तृणाम्** = स्मरण करने वाले भक्तों के लिए तो, **परमम्** = आप सर्वोत्कृष्ट, **मङ्गलम्-असि** = मंगलरूप ही हैं।

भावः–यहाँ तक सगुण निराकार और सगुण साकार स्वरूप का वर्णन किया गया। अब निर्गुण निराकार स्वरूप का वर्णन प्रारंभ करते हैं, साथ ही श्रुति एवं विद्वदनुभवसिद्ध महादेव की आनन्दरूपता का प्रतिपादन भी करते हैं॥ २४ ॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः।
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान्॥ २५ ॥

पदच्छेदः– मनः, प्रत्यक्, चित्ते, सविधम्, अवधाय, आत्तमरुतः, प्रहृष्यद्रोमाणः, प्रमद-सलिलोत्सङ्गितदृशः। यद्, आलोक्य, आह्लादम्, ह्रद, इव, निमज्य, अमृतमये, दधाति, अन्तः, तत्त्वम्, किम्, अपि, यमिनः, तत्, किल भवान्॥ २५ ॥

सविधम् = शास्त्रोक्त विधिपूर्वक, **आत्तमरुतः मनः** = प्राणायाम से प्राण-गति को वश करने वाले और मनोवृत्ति को, **प्रत्यक्-चित्ते** = अन्तरात्मा में, **अवधाय** = समाहित कर, **यत्-किम्-अपि** = जिस किसी भी, **तत्त्वम्** = सच्चिदानन्द रूप को, **आलोक्य** = प्रत्यक्ष अनुभव कर, **प्रहृष्यद्रोमाणः** = रोमाञ्चित देह एवं, **प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः** = अत्यन्त आनन्दाश्रु से भरे नेत्र वाले, **अमृतमये ह्रद-इव** = अमृत भरे सरोवर में, **निमज्य** = निमग्न होकर, **अन्तः** = आभ्यान्तर स्वरूप, **आह्लादम्** = सुख को, **दधति** = धारण करते हैं, **तत्** = वह ब्रह्मानन्द तत्त्व, **किल** = श्रुति प्रसिद्ध, **भवान्** = आप ही तो हैं।

भावः–इस प्रकार श्रुति एवं विद्वानों के प्रत्यक्षानुभव से भगवान् की आनन्द रूपता की सिद्धि हो जाने पर तार्किकों का मत खण्डित हो गया, जो वे कहा करते थे, कि भगवान् आनन्द स्वरूप नहीं हैं॥ २५ ॥

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं,
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि॥ २६ ॥

पदच्छेदः– त्वम्, अर्कः, त्वम्, सोमः, त्वम्, असि, पवनः, त्वम्, हुतवहः, त्वम्, आपः, त्वम्, व्योम, त्वम्, उ, धरणिः, आत्मा, त्वम्, इति, च। परिच्छिन्नाम्, एवम्, त्वयि, परिणताः, बिभ्रतु, गिरम्, न, विद्मः, तत्, तत्त्वम्, वयम्, इह, तु, यत्, त्वम्, न, भवसि॥ २६ ॥

त्वम्-अर्कः-असि = आप सूर्य हैं, **त्वम् सोमः** = आप चन्द्रमा हैं, **त्वम् पवनः** = आप वायु हैं, **त्वम् हुतवहः** = आप अग्नि हैं, **त्वम्-आपः** = आप जल हैं, **त्वम् व्योम** = आप आकाश हैं, **त्वम्-उ-धरणिः** = आप ही पृथिवी हैं, **च त्वम्-आत्मा** = और आत्मा हैं। **इति-एवम्** = इस प्रकार अष्टधा मूर्तियों के प्रतिपादक, **परिच्छिन्नाम् गिरम्** = परिमित अर्थ के बोधक वाणी को, **परिणताः** = दृढ़ाग्रही विद्वान् लोग, **त्वयि** = आप के विषय में, **बिभ्रतु** = भले ही बोलते रहें, **तु वयम्-इह** = किन्तु हम तो संसार में, **तत् तत्त्वम्** = उस वस्तु को, **न विद्मः** = नहीं जानते, **यत् त्वम् न भवसि** = जो आप नहीं हैं।

भावः–आपके अष्टधा स्वरूप प्रतिपादक आगम वाक्यों का आश्रय लेकर दृढ़ग्राही विद्वान् लोग भले ही उक्त रीति से संकुचित अर्थ बोधक शब्द आपके विषय में कहें, पर हमारी समझ से ऐसी कोई वस्तु संसार में नहीं है, जो सर्वात्मा आप से भिन्न हो। अतएव "इदं सर्वं यदयमात्मा" इत्यादि श्रुतियाँ आपकी सर्वात्मता को बतलाती हैं॥ २६ ॥

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः,
समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम्॥ २७ ॥

पदच्छेदः– त्रयीम्, तिस्रः, वृत्तीः, त्रिभुवनम्, अथः, त्रीन्, अपि, सुरान्, अकाराद्यैः, वर्णैः, त्रिभिः, अभिदधत्, तीर्णविकृति। तुरीयम्, ते, धाम, ध्वनिभिः, अवरुन्धानम्, अणुभिः, समस्तम्, व्यस्तम्, त्वाम्, शरणद, गृणाति, ओम्, इति, पदम्॥ २७ ॥

शरणद! = हे शरणार्थिमात्र को शरण देने वाले भगवन्! **अकाराद्यैः** = अकार, उकार एवं मकार इन, **त्रिभिः वर्णैः** = तीनों वर्णों में, **व्यस्तम्** = विभक्त हुआ, **ॐ-इति पदम्** =ॐ यह पद, **त्रयीम्** = ऋग्, यजुः और सामरूप तीनों वेदों को, **तिस्रः वृत्तीः** = जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति या सृष्टि, स्थिति और संहार अथवा तदुपलक्षित देवों को, **त्रिभुवनम्** = "भूर्भुवः स्वः" इन तीनों लोक, **अथःत्रीन् सुरान्-अपि** = और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तीनों देवताओं को भी, **अभिदधत्** = (शक्तिवृत्ति से वाच्यार्थरूप में) कहता है। **समस्तम्** = और अविभक्त हुआ 'ॐ' पद, **तीर्णविकृति** = सर्व विकार रहित, **ते तुरीयम् धाम** = आपके तुरीय स्वरूप को, **अणुभिः** = सूक्ष्मअर्धमात्रा रूप, **ध्वनिभिः** = ध्वनियों के द्वारा, **अवरुन्धानम्** = लक्षणा से बोध कराता हुआ, **त्वाम्** = (समस्त-व्यस्त सर्वात्मा) आपको ही, **गृणाति** = कहता है।

भावः–*सम्पूर्ण विश्व का कारण वेद है और वेद का सारतत्त्व सर्वश्रेष्ठ शिव का नाम "ओम्" है। इसमें अ, उ, और म ये तीन मात्राएँ हैं। विभक्त तीनों मात्राओं के द्वारा "ओम्" यह पद शक्तिवृत्ति से समष्टि, व्यष्टि, स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण प्रपंच विशिष्ट चैतन्य को कहता है, तथा लक्षणावृत्ति से तदुपलक्षित शुद्धचैतन्य को कहता है। वैसे ही सूक्ष्म अर्धमात्रा द्वारा यही 'ओम्' पद कारण सहित सम्पूर्ण प्रपंच से रहित केवल तुरीयत्व विशिष्ट को शक्तिवृत्ति से एवं तुरीयत्व उपलक्षित को लक्षणावृत्ति से बतलाता है। इस प्रकार कार्य ब्रह्म और कारण ब्रह्म के रूप में विद्यमान आप शिवतत्त्व को ही तो सभी प्रकार से "ओम्" यह पद बतलाता है। वस्तुतः वाच्य अपने वाचक से अभिन्न है और वाचक सम्पूर्ण नाम का "ओम्" के साथ अभेद है, क्योंकि सावधानी से सुनने पर व्यक्त तथा अव्यक्त सभी शब्द का उदय और अस्त ओम् ही जान पड़ता है॥ २७ ॥*

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि,
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते॥ २८ ॥

पदच्छेदः–भवः, शर्वः, रुद्रः, पशुपतिः, अथ, उग्रः, सहमहान्, तथा, भीमेशानौ, इति, यत्, अभिधानाष्टकम्, इदम्। अमुष्मिन्, प्रत्येकम्, प्रविचरति, देव, श्रुतिः, अपि, प्रियाय, अस्मै, धाम्ने, प्रणिहितनमस्यः, अस्मि, भवते॥ २८ ॥

देव! = हे दिव्यरूप भगवन्! **भवः** = जगत् को उत्पन्न करने वाला, **शर्वः** = सर्व संहारकर्ता, **रुद्रः** = दुष्टों एवं पापियों को रुलाने वाला, **पशुपतिः** = जीवों का स्वामी, **अथ-उग्रः** = और अज्ञानादि दोषों के नाश करने में प्रचण्ड, **सहमहान्** = देवाधिदेव महादेव, **तथा भीमेशानौ** = तथा पापियों के लिए भयङ्कर और अपराधियों का शासक, **इति यत् इदम्** = इस प्रकार जो ये, **अभिधानाष्टकम्** = आपके आठ नाम हैं। **अमुष्मिन् प्रत्येकम्** = इनमें से प्रत्येक नाम में, **श्रुतिः-अपि** = वेदशास्त्र और नारदादि ऋषिगण भी, **प्रविचरति** = अच्छी प्रकार से विचरते हैं, अर्थात् इन्हें मोक्ष का साधन बतलाते हैं। अतः **अस्मै प्रियाय** = इस प्रिय रूप से सर्वत्र विद्यमान, **धाम्ने** = ज्योतिस्वरूप, **भवते** = आप शंकर को, **प्रणिहितनमस्यः अस्मि** = मनसा, वाचा, कर्मणा बारम्बार नमस्कार से युक्त होता हूँ।

__भावः__–प्रणव जप में अनधिकारी को प्रसिद्ध 'भव शर्व' इत्यादि नाम जप से सकल पुरुषार्थ की सिद्धि होती है। अतः सर्वसाधारण प्रसिद्ध भवादि नाम से भगवान् शंकर की स्तुति करते हैं॥ २८ ॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमितिसर्वाय च नमः॥ २९ ॥

पदच्छेदः– नमः, नेदिष्ठाय, प्रियदव, दविष्ठाय, च, नमः, नमः, क्षोदिष्ठाय, स्मरहर, महिष्ठाय, च, नमः। नमः, वर्षिष्ठाय, त्रिनयन, यविष्ठाय, च, नमः, नमः, सर्वस्मै, ते, तत्, इदम्, इति, सर्वाय, च, नमः॥ २९ ॥

प्रियदेव! = हे निर्जन एकान्तप्रिय भगवन्! **नेदिष्ठाय** = (ज्ञानियों की दृष्टि से) अत्यन्त समीपवर्ती, **च दविष्ठाय** = और (अज्ञानियों की दृष्टि से) दूर से दूरवर्ती, **ते नमः नमः** = आप को नमस्कार है, नमस्कार है, **स्मरहर!** = हे कामदेवनाशक! **क्षोदिष्ठाय** = सूक्ष्म से भी अतिसूक्ष्म, **च महिष्ठाय** = और महान् से भी अतिमहान्, **नमः नमः** = आपको वार-वार नमस्कार है। **त्रिनयन!** = हे सूर्यादि तीन नेत्र वाले! **वर्षिष्ठाय** = वृद्ध-कालातीत, **च यविष्ठाय** = और तरुण से भी सदा तरुण, **नमः नमः** = आपको पुनः-पुनः नमस्कार है, **सर्वस्मै** = सर्वात्मरूप आपको, **नमः च** = नमस्कार है और (विशेष क्या कहें), **तद्-इदम्-इति सर्वाय नमः** = परोक्ष-अपरोक्ष इस प्रकार अनिर्वचनीय संपूर्णप्रपञ्चाधिष्ठान आपको नमस्कार है अथवा परोक्ष-अपरोक्ष सम्पूर्ण प्रपंच से परे असङ्ग निर्विकार स्वरूप आपको अनेकशः नमस्कार है॥ २९ ॥

बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः॥ ३० ॥

पदच्छेदः—बहलरजसे, विश्वोत्पत्तौ, भवाय, नमः, नमः, प्रबलतमसे, तत्संहारे, हराय, नमः, नमः। जनसुखकृते, सत्त्वोद्रिक्तौ, मृडाय, नमः, नमः, प्रमहसि, पदे, निस्त्रैगुण्ये, शिवाय, नमः, नमः॥ ३० ॥

विश्वोत्पत्तौ = चराचर विश्व की उत्पत्ति के लिए, **बहलरजसे** = रजोगुण प्रधान, **भवाय** = (ब्रह्मा नाम से प्रसिद्ध) भवरूप को, **नमः नमः** = बारंबार नमस्कार है। **जनसुखकृते** = सभी जीवों को सुख देने के लिए, **सत्त्वोद्रिक्तौ** = सत्त्वगुण प्रधान, **मृडाय** = विष्णु स्वरूप को, **नमः नमः** = नमस्कार है, नमस्कार है। **तत्संहारे** = विश्व के संहार के लिए, **प्रबलतमसे** = तमोगुण प्रधान, **हराय** = संहारक रुद्ररूप को, **नमः नमः** = भूयो भूयो नमस्कार है, **निस्त्रैगुण्ये** = तथा त्रिगुणातीत, **प्रमहसि** = अविद्यादि लेशरहित पूर्णप्रकाश, **पदे** = नित्य-मुक्त-स्वरूप, **शिवाय** = शिव को, **नमः नमः** = पुनः पुनः नमस्कार है।

भावः—*हे शिव! भले ही विश्व की सृष्टि, स्थिति तथा संहार के लिए आप सत्त्वादि गुणों का आश्रय लेकर त्रिदेव बन जावें, पर वस्तुतः आप गुणातीत, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त-स्वभाव हैं। अतः पूर्वोक्त सभी स्वरूपों में आपको भूरिशः नमस्कार है॥ ३० ॥*

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम्॥ ३१ ॥

पदच्छेदः– कृशपरिणति, चेतः, क्लेशवश्यम्, क्व, च, इदम्, क्व, च, तव, गुणसीमोल्लङ्घिनी, शश्वद्, ऋद्धिः। इति, चकितम्, अमन्दीकृत्य, माम्, भक्तिः, आधात्, वरद, चरणयोः, ते, वाक्यपुष्पोपहारम्॥ ३१ ॥

वरद! = हे मनो वाँछित वर देने वाले! **कृशपरिणति** = अतिअल्पज्ञ शक्ति हीन, **च क्लेशवश्यम्** = और अविद्यादि पंच क्लेशाधीन अथवा कठिनता से वश में होने योग्य, **इदं चेतः** = यह चित्त कहाँ? अर्थात् सर्वथा अयोग्य है। **च गुणसीमोल्लङ्घिनी** = और गुणों की सीमा को पारकर जाने वाली निःसीम, **तव शश्वद्** = आप की नित्य, **ऋद्धिः क्व** = महिमा कहाँ? **इति** = इस प्रकार (अपने में शक्ति न देखकर), **चकितं माम्** = भयभीत हुए भी मुझको, **ते भक्तिः** = आप की भक्ति ने, **अमन्दीकृत्य** = उत्साहित कर बलात्, **वाक्यपुष्पोपहारम्** = इस स्तोत्र वाक्यरूप पुष्पों का उपहार, **चरणयोः** = आपके चरणों में, **आधात्** = समर्पित करवा ही दिया।

भावः*–आपकी भक्ति ने ही मुझ जैसों से इतना बड़ा कार्य करवाया है। अतः अब आप मेरे अपराध को क्षमाकर मुझे अपनी भक्ति प्रदान करें॥ ३१ ॥*

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति॥ ३२ ॥

पदच्छेदः—असितगिरि-समम्, स्यात्, कज्जलम्, सिन्धुपात्रे, सुरतरुवरशाखा, लेखनी, पत्रम्, उर्वी। लिखति, यदि, गृहीत्वा, शारदा, सर्वकालम्, तदपि, तव, गुणानाम्, ईश, पारम्, न याति॥ ३२ ॥

ईश! = हे सर्वनियामक महेश्वर! **यदि सिन्धुपात्रे** = यदि समुद्ररूप दवात में, **असितगिरिसमम्** = नीलपर्वत के समान, **कज्जलं स्यात्** = स्याही होवे और, **सुरतरुवर-शाखा लेखनी** = कल्पवृक्ष की सुदृढ़ शाखाएँ लेखनी बनें तथा **उर्वी पत्रम्** = सम्पूर्ण पृथिवी कागज बने, **गृहीत्वा** = (ऐसे असम्भावित साधनों को) लेकर, **शारदा** = साक्षात् सरस्वती भगवती, **सर्वकालम्** = सभी समय, **लिखति** = लिखती रहें, **तदपि तव** = तो वह भी आपके, **गुणानाम्** = अनन्तदिव्य गुणों का, **पारं न याति** = पार नहीं पा सकती हैं।

भावः—*जब असम्भावित साधनों को लेकर शारदा भी आपके गुणों को जानने और लिखने में पार नहीं पा सकती हैं, तो फिर हमारी क्या गिनती है॥ ३२ ॥*

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले-
ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य।
सकलगणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार॥ ३३ ॥

पदच्छेदः– असुर-सुरमुनीन्द्रैः, अर्चितस्य, इन्दुमौलेः, ग्रथित-गुण-महिम्नः, निर्गुणस्य, ईश्वरस्य। सकलगणवरिष्ठः, पुष्पदन्ताभिधानः, रुचिरम्, अलघुवृत्तैः, स्तोत्रम्, एतत्, चकार॥ ३३ ॥

असुरसुरमुनीन्द्रैः = देव, दानव तथा बड़े-बड़े मुनियों के द्वारा, **अर्चितस्य** = पूचित, **ग्रथितगुणमहिम्नः** = शास्त्र प्रतिपादित गुणों की महिमा से युक्त, **निर्गुणस्य** = (पर वास्तव में) निर्गुण, **ईश्वरस्य** = भगवान्, **इन्दुमौलेः** = चन्द्रशेखर के, **एतत् रुचिरं स्तोत्रम्** = इस मनोहर शिवमहिम्नःस्तोत्र नामक स्तोत्र को, **सकलगणवरिष्ठः** = सभी गन्धर्वों का राजा, **पुष्पदन्ताभिधानः** = पुष्पदन्त नामक गन्धर्व ने, **अलघुवृत्तैः** = (शिखरिणी आदि) बड़े छन्दों में, **चकार** = बनाया॥ ३३ ॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेत-
त्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्त्तिमांश्च॥ ३४ ॥

पदच्छेदः–अहः, अहः, अनवद्यम्, धूर्जटेः, स्तोत्रम्, एतत्, पठति, परमभक्त्या, शुद्धचित्तः, पुमान्, यः। सः, भवति, शिवलोके, रुद्रतुल्यः, तथा, अत्र, प्रचुरतरधनायुः, पुत्रवान्, कीर्तिमान् च ॥ ३४ ॥

यः पुमान् = जो पुरुष, **शुद्धचित्तः** = शुद्धान्तःकरण होकर, **परमभक्त्या** = उत्कृष्ट प्रेम से, **धूर्जटेः** = विशाल जटाधारी शंकर के, **अनवद्यम्** = दोष रहित पवित्र, **एतत् स्तोत्रम्** = इस स्तोत्र को, **अहः अहः** = प्रतिदिन (नियमपूर्वक) **पठति** = पढ़ता है। **सः अत्र** = वह इस मनुष्यलोक में, **प्रचुरतरधनायुः** = अधिकाधिक आयु और धन से युक्त हो, **पुत्रवान्** = पुत्रादि कुटुम्ब वाला, **च कीर्तिमान्** = और यशस्वी, **भवति** = होता है तथा और मरने के बाद, **शिवलोके** = शिवलोक कैलासधाम में, **रुद्रतुल्यः** = शंकर के सदृश हो महिमान्वित होता है।

भावः–*३३वें श्लोक में स्तुतिकर्ता अपना परिचय देकर इस श्लोक से शिवमहिम्नः स्तोत्र की पाठ विधि तथा फल बतला रहे हैं॥ ३४ ॥*

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।
महिम्नःस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ ३५ ॥

पदच्छेदः–दीक्षा, दानम्, तपः, तीर्थम्, ज्ञानम्, यागादिकाः, क्रियाः। महिम्नः स्तवपाठस्य, कलाम्, न, अर्हन्ति, षोडशीम्॥ ३५ ॥

दीक्षा = व्रतादि की दीक्षा लेना, **दानम्** = गोधनादि का दान देना, **तपः तीर्थम्** = तपश्चर्या, तीर्थ सेवन, **ज्ञानम्** = देवोपासना और **यागादिकाः क्रियाः** = यागादि सम्पूर्ण क्रियायें **महिम्नःस्तवपाठस्य** = शिवमहिम्नःस्तोत्र के पाठ की, **षोडशीम् कलाम्** = सोलहवीं कला के भी, **न अर्हन्ति** = योग्य नहीं हैं॥ ३५ ॥

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गन्धर्वभाषितम्।
अनौपम्यं मनोहारि शिवमीश्वरवर्णनम्॥ ३६ ॥

पदच्छेदः– आसमाप्तम्, इदम्, स्तोत्रम्, पुण्यम्, गन्धर्वभाषितम्। अनौपम्यम्, मनोहारि, शिवम्, ईश्वरवर्णनम्॥ ३६ ॥

गन्धर्वभाषितम् = पुष्पदन्तगन्धर्व से कहा गया, **इदं पुण्यं स्तोत्रम्** = यह पवित्र स्तोत्र, **आसमाप्तम्** = समाप्ति पर्यन्त, **अनौपम्यम्** = अनुपम, **मनोहारि शिवम्** = मनोहर कल्याणमय, **ईश्वर-वर्णनम्** = महेश्वर की महिमा तथा स्वरूप वर्णनात्मक है॥ ३६ ॥

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥ ३७ ॥

पदच्छेदः– महेशात्, न, अपरः, देवः, महिम्नः, न, अपरा, स्तुतिः। अघोरात्, न, अपरः, मन्त्रः, न, अस्ति, तत्त्वम्, गुरोः, परम्॥ ३७ ॥

महेशात् = शंकर से बढ़कर, **अपरः देवः न** = दूसरा देव नहीं, **महिम्नः** = शिवमहिम्नःस्तोत्र से बढ़कर, **अपरा स्तुतिः न** = दूसरा स्तोत्र नहीं है, **अघोरात्** = प्रणवमन्त्र से बढ़कर, **अपरः मन्त्रः न** = अन्य मन्त्र नहीं है, **गुरोः परम्** = और सद्गुरु से बढ़कर, **तत्त्वं न अस्ति** = तत्त्व नहीं है।

भावः– *ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।*
सर्वेभ्यः सर्व-सर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥

इस मंत्र को कुछ लोग अघोर मंत्र कहते हैं। मन्त्रशास्त्रानुसार दीक्षा ग्रहण करके ही किसी भी मंत्र का जप करना चाहिये, अन्यथा मंत्र की सिद्धि या फल की प्राप्ति नहीं होती है॥ ३७ ॥

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शिशुशशिधरमौलेर्देवदेवस्य दासः।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषा-
त्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः॥ ३८ ॥

पदच्छेदः—कुसुमदशननामा, सर्वगन्धर्वराजः, शिशुशशिधरमौलेः, देवदेवस्य, दासः। सः, खलु, निजमहिम्नः, भ्रष्टः, एव, अस्य, रोषात्, स्तवनम्, इदम्, अकार्षीत्, दिव्यदिव्यम्, महिम्नः॥ ३८ ॥

शिशुशशिधरमौलेः = जटा मुकुट में बालचन्द्र को धारण करने वाले, **देवदेवस्य दासः** = देवों के देव महादेव का दास, **कुसुमदशननामा** = पुष्पदन्त नाम वाला, सर्वगन्धर्वराजः = सभी गन्धर्वों का राजा, **अस्य रोषाद्-एव** = शिवजी के कोप से ही, **निजमहिम्नः** = तिरोधान के सामर्थ्यरूप अपनी महिमा से, **भ्रष्टः** = च्युत हो गया था, **सः खलु** = उसी ने, (भगवान् शंकर को प्रसन्न करने के लिए), **महिम्नः** = शंकर जी की महिमा के, **दिव्यदिव्यम्** = दिव्यातिदिव्य, **इदं स्तवनम्** = इस स्तोत्र को, **अकार्षीत्** = बनाया॥ ३८ ॥

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम्॥ ३९ ॥

पदच्छेदः—सुरवरमुनिपूज्यम्, स्वर्गमोक्षैकहेतुम्, पठति, यदि, मनुष्यः, प्राञ्जलिः, न, अन्यचेताः। व्रजति, शिवसमीपम्, किन्नरैः, स्तूयमानः, स्तवनम्, इदम्, अमोघम्, पुष्पदन्तप्रणीतम्॥ ३९ ॥

सुरवरमुनिपूज्यम् = बड़े-बड़े देवता और मुनियों से भी प्रशंसनीय, **स्वर्गमोक्षैकहेतुम्** = स्वर्ग तथा मोक्ष का प्रमुख साधन, **पुष्पदन्तप्रणीतम्** = पुष्पदन्त से रचित, **अमोघम्** = अवश्यमेव फल देने वाले, **इदं स्तवनम्** = इस स्तोत्र को, **यदि मनुष्यः** = यदि कोई मनुष्य, **अन्यचेताः न** = अन्य वस्तु में चित्त न लगाकर, **प्राञ्जलिः** = तथा हाथ जोड़कर, **पठति** = पढ़ता है (तो निःसन्देह वह), **किन्नरैः** = किन्नरों के द्वारा, **स्तूयमानः** = स्तूयमान होकर, **शिवसमीपम्** = भगवान् शंकर के पास, **व्रजति** = पहुँच जाता है अर्थात् शिवसामीप्य मुक्ति को प्राप्त कर लेता है॥ ३९ ॥

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः॥ ४० ॥

पदच्छेदः– श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन, स्तोत्रेण, किल्विषहरेण, हरप्रियेण। कण्ठस्थितेन, पठितेन, समाहितेन, सुप्रीणितः, भवति, भूतपतिः, महेशः॥ ४० ॥

श्रीपुष्पदन्तमुख-पङ्कजनिर्गतेन = श्रीपुष्पदन्ताचार्य के मुखारविन्द से निकले हुए, **किल्विषहरेण** = त्रिविध ताप नाशक, **हरप्रियेण** = शंकरजी को सर्वाधिक प्रिय, **स्तोत्रेण** = इस स्तोत्र के, **समाहितेन** = एकाग्रचित हो, **कण्ठस्थितेन** = कण्ठस्थ दैनिक, **पठितेन** = पाठ करने से, **भूतपतिः महेशः** = चराचर समस्त प्राणियों के रक्षक भगवान् शंकर, **सुप्रीणितः भवति** = अत्यन्त प्रसन्न हो जाते हैं॥ ४० ॥

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः॥ ४१ ॥

पदच्छेदः– इति, एषा, वाङ्मयी, पूजा, श्रीमच्छङ्करपादयोः। अर्पिता, तेन, देवेशः, प्रीयताम्, मे, सदाशिवः॥ ४१ ॥

इति एषा = इस प्रकार यह, **वाङ्मयी पूजा** = शब्दमयी पूजा, **श्रीमच्छङ्करपादयोः अर्पिता** = श्रीशंकर भगवान् के चरणों में हमने समर्पण किया। **तेन** = इसके समर्पण करने से, **देवेशः** = देवाधिदेव, **सदाशिवः** = नित्य मंगलमय महादेव, **मे प्रीयताम्** = मुझ पर प्रसन्न होवें॥ ४१ ॥

इति पुष्पदन्ताचार्यप्रणीतं शिवमहिम्नःस्तोत्रं सटीकं समाप्तम्॥

यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर! ॥ ४२ ॥
हरिः ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

पदच्छेदः—यत्, अक्षरम्, पदम्, भ्रष्टम्, मात्राहीनम्, च, यत्, भवेत्। तत्, सर्वम्, क्षम्यताम्, देव, प्रसीद, परमेश्वर॥ ४२ ॥

देव! = हे दिव्यगुणसम्पन्न शिव! **यद्-अक्षरम्** = (प्रमादवश) जो अक्षर, **च पदम्** = और पद, **भ्रष्टम् भवेत्** = अशुद्ध उच्चारण हुआ हो, **परमेश्वर!** = हे परमेश्वर! **तत् सर्वं क्षम्यताम्** = वह सब क्षमा कर दें, **प्रसीद** = तथा सदा आप प्रसन्न होवें॥ ४२ ॥

॥ ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!! ॥

सर्वोऽपि ज्ञानमाप्नोतु सर्वोऽप्यज्ञानमन्ततु।
सर्वस्तरतु संसारं सर्वः सर्वत्र नन्दतु॥

अथ शिवनामावलिः

ॐ महादेव ! शिव ! शङ्कर ! शम्भो ! उमाकान्त ! हर ! त्रिपुरारे ! ।
मृत्युञ्जय ! वृषभध्वज ! शूलिन् ! गङ्गाधर ! मृड ! मदनारे ! ॥

हर ! शिव ! शङ्कर ! गौरीशं, वन्दे गङ्गाधरमीशम्।
रुद्रं पशुपतिमीशानं, कलये काशीपुरीनाथम्॥

जय शम्भो ! जय शम्भो ! शिव ! गौरीशङ्कर ! जय शम्भो ! ।
जय शम्भो ! जय शम्भो ! शिव ! गौरीशङ्कर ! जय शम्भो ! ॥
शिव ! शिवेति शिवेति शिवेति वा, हर ! हरेति हरेति हरेति वा।
भव ! भवेति भवेति भवेति वा, मृड ! मृडेति मृडेति मृडेति वा॥
भज मनः शिवमेव निरन्तरम्॥

श्रीहृषीकेशस्थकैलासाश्रमप्रतिष्ठापकभगवत्पूज्यपाद-
श्री १००८ श्रीमत्स्वामिधनराजगिरिचरणानामन्तिमोपदेशः

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

संसारोग्रदवप्रतापविहतौ पीयूषभानोः करा
अज्ञानान्धतमोपसारणविधौ मार्तण्डचण्डांशवः।
येषां सूक्तय आश्रिताः शिवहरास्तान्ब्रह्मनिष्ठान्गुरून्
भक्त्या श्रीधनराजगिर्यभिधया ख्यातान्नमामो वयम्॥ १ ॥
अश्वाङ्कग्रहभूमिविक्रमशरन्मासे तपस्येऽसिते
पक्षे रुद्रतिथौ भृगावुपदिशञ्छिष्यानखण्डाद्वयम्॥
तत्त्वं श्रीधनराजगिर्यभिधया ख्यातो विदामग्रणी-
र्वैदेहं सुखमन्वभूदहिरिव त्यक्त्वा शरीरं त्वचम्॥ २ ॥

अयं किल महानुभावः करतलामलकीकृतात्मतत्त्व आसन्नकलालयकाल उपनमन्निजवियोगभावनाकुलविनेयवर्गमुपासीनमवलोक्यसञ्जातकरुणोऽन्तिम-मिममुपदेशमकरोत्। किं मां मरणधर्माणमाकलयन्ति भवन्तः। यस्य मम 'अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणः' इत्येवमादीनि भगवद्वचांसि जन्मादिकमपाकुर्वन्ति का नाम तस्य मरणवार्ता। अपि च सच्चिदानन्दस्वरूपे कूटस्थसाक्षिणि निखिलकल्पनाधिष्ठाने प्राणादीनामपि प्राणे मय्यपगते को नाम सत्तास्फूर्तिमान् भवेदिति शून्यवाद एवापद्येत।

कथमिव च सोऽपि साक्षिणं मामनाश्रित्यानुभवपथमारोहेत्। किञ्चा जातवादाध्यायिषु भवत्स्वकाण्ड एवायं शोकसञ्चारो, यतो 'न कश्चिज्जायते जीवः' इत्यादीन्यजातवादसूक्तानि प्रत्यगात्मनो मम जन्माभावमवबोधयन्ति मरणाभावमप्यावेदयन्त्येव। अन्यच्च शरीरवियोगानुसन्धानमनूद्भवन्तं शोकपङ्कं 'यथा काष्ठं च', 'यथा प्रपायां बहवो मिलन्ते' इत्यादिसुभाषितामृतैः सङ्क्षालयन्ति सुधियः। 'आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेपि तत्तथा' 'न निरोधो न चोत्पत्ति' रित्यादिसूक्त्युन्मूलितमूलस्य च सर्वथाऽनवसर एव शोकस्य। 'अपागादग्नेरग्नित्वमि' त्येवं विधाभिरपौरुषेयीभिर्वाग्भिरनन्यत्वं कारणात्कार्य्यस्यावेदयन्तीभिः प्रत्यगात्मनः सद्रूपाधिष्ठानान्मत्तः शरीरादिकमनन्यमाकलयतां च भवतां का नाम शोककलनेति। पुनश्चोक्तविधोपदेशसुधाधाराक्षालितशोकपङ्कमाह्लादमानमन्तेवासिमण्डलमीक्षमाणो मुदितमनाः प्रश्नोपनिषदि सुषुप्तिमधिकृत्य 'पृथिवी च पृथिवीमात्रा चे' त्यादिनाऽविद्याप्रत्युपस्थापितोपाधिविलयात् सम्भावितं निर्विशेषं शिवं शान्तमद्वैतमक्षरमहमिदानीं क्षपितारब्धकर्मा प्रविलीनकलो 'ब्रह्मैव सन्ब्रह्माप्येमी' त्युक्त्वोपारमत।

इममन्तिमोपदेशं पूर्णानन्दगिर्याद्यनुचरप्रार्थितपरमहंसपरिव्राजकाचार्य १०८ श्रीमत्स्वामिगोविन्दानन्दगिरीतिशुभाभिधेयाः सङ्कलितवन्तः॥

यत्कारुण्यलवाद्विनेयनिवहा जाड्यं व्यापोह्याद्वयं
ब्रह्मानन्दमशेषवेदविदितं विज्ञाय पारङ्गताः।
संसाराम्बुनिधेः कृपापरवशांस्तान्सद्गुरून् श्रीडच्यगो-
विन्दानन्दयतीश्वराननुदिनं भक्त्या नमस्कुर्महे॥

**निवेदकः– श्रीहृषिकेशस्थकैलासाश्रमप्रतिष्ठापकभगवत्पूज्यपाद-
१०८ श्रीमत्स्वामिधनराजगिरिकृपापात्र-पूर्णानन्दगिरिः।**

श्री १०८ श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य स्वामी धनराजगिरिजी महाराज का शिष्यवर्ग के प्रति अन्तिम उपदेश का भाषानुवाद

कविता

उन्नीसै सतासठ शरत् वदि फागन में
भृगुवार ग्यारस पुनीत आदियाम में।
श्री धनराजगिरि वेदन के पारगामि
देह को तियाग के समाये निजधाम में॥
हृषीकेश बीच गङ्गातीर पर शोभमान
आश्रम मनोहर कैलास शुभनाम में।
भवदवदारुणदहन दुखिजननको
निजदृष्टिसुधा से जो करत आराम में॥ १ ॥

शरीरत्याग के समय से तीन घंटा प्रथम स्वामी जी महाराज की कुछ काल तक किञ्चित् मूर्छा-सी हो गई थी। उस समय में उनके समीप बैठी हुई शिष्य मंडली में शोक छा गया। किसी के नेत्रों से अश्रुपात होने लगा, कोई नाड़ी देखने लगा तथा कोई उनके उदर पर हाथ धरकर शीतोष्णता जाँचने लगा, कोई शोकवार्ता में संलग्न हुआ। ऐसी ही अवस्था में स्वामी जी महाराज सावधान होकर स्वस्तिकासन लगाकर बैठ गए और शिष्यवर्ग के प्रति कहने लगे-क्या आप हमारे को मरने वाला समझते हैं? आप विचार कर देखिये कि जब भगवान् श्रीकृष्णदेव श्रीमुख से 'अजो नित्य: शाश्वतोयं पुराण:' इत्यादि वचनों द्वारा प्रत्यगात्मा के जन्ममरणादिकों का अभाव कथन करते हैं, तब प्रत्यगभिन्न मेरे स्वरूप का मरण समझना सर्वथा अनुचित है और सच्चिदानन्द कूटस्थ साक्षी सर्वाधिष्ठान निखिल अनात्मवर्ग को सत्तास्फूर्ति देनेवाला मैं भी जब मरने वाला होऊँ तब किसी भी वस्तु की प्रतीति नहीं हो सकेगी। अधिष्ठानस्वरूप मेरे बिना सर्व जगत् को गगन-कुसुम-समान होने से शून्यवाद का प्रसंग हो जावेगा और 'न कश्चिज्जायते जीव:' इत्यादि वाक्यों से आचार्यों ने भी प्रत्यगात्मा के जन्मादिकों का अभाव ही बोधन किया है। तब आप लोगों को तन्निमित्तक शोक करना सर्वथा अयोग्य है और शरीरवियोग प्रयुक्तशोक करना भी आप लोगों को सर्वथा उचित नहीं है क्योंकि जैसे समुद्र में जल के वेग से अनेक काष्ठ कभी इकट्ठे हो जाते हैं, फिर जल के वेग से ही पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। वैसे ही प्रारब्ध वेग

से कदाचित् इन शरीरों का संयोग हो जाता है, पुन: कदाचित् प्रारब्ध वेग से ही वियोग हो जाता है। ऐसे अवश्यंभावी संयोग-वियोग का निश्चय करके विवेकी पुरुष शोकांकुर का उन्मूलन कर देते हैं और अद्वैत के उपदेश करने वाले जो आचार्य्य हैं उनका तो यह उपदेश है कि शरीरादिप्रपञ्च प्रथम नहीं था अन्त में भी नहीं होगा, मध्य में जो प्रतीत होता है वह भी आकाश में नीलता के समान अनहुआ ही प्रतीत होता है। ऐसा अजातवाद के उपदेशों का पठन-पाठन करने वाले आप लोगों को शरीर वियोग निमित्त शोक करना सर्वथा अनुचित है। क्या कोई स्वप्न के बन्धुजन का जाग्रत में वियोग देखकर शोक करता है इत्यादि स्वामीजी महाराज के उपदेशों को श्रवण करके और ऐसे समय में उनके उत्साह और सावधानता को देखकर सर्व शिष्यवर्ग के मुख और मन प्रफुल्लित हो गये। इसके अनन्तर स्वामी जी महाराज ने कहा-अब प्रारब्धक्षय और कलालयपूर्वक विदेह-कैवल्य को प्राप्त होते हैं, ऐसा कह कर तूर्ष्णीभाव को अवलम्बन करके निज स्वरूप में सुप्रतिष्ठित हो गये। इति ॥

निवेदक:- श्रीहृषीकेशकैलासाश्रमप्रतिष्ठापकभगवत्पूज्यपाद १०८
श्रीमत्स्वामिधनराजगिरिकृपापात्र-पूर्णानन्दगिरि:।

रुद्राष्टकम्

नमामीशमीशान निर्वाणरूपम्। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम्॥
अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम्। चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम्॥ १ ॥
निराकारमोंकारमूलं तुरीयम्। गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम्॥
करालं महाकालकालं कृपालम्। गुणागारसंसारपारं नतोऽहम्॥ २ ॥
तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम्। मनोभूतकोटिप्रभा श्रीशरीरम्॥
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगङ्गा। लसद्भालबालेन्दुकण्ठे भुजङ्गा॥ ३ ॥
चलत्कुण्डलं भ्रूसुनेत्रं विशालम्। प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालम्॥
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालम्। प्रियं शङ्करं सर्वनाथं भजामि॥ ४ ॥
प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम्। अखण्डं अजं भानुकोटिप्रकाशम्॥
त्रय: शूलनिर्मूलनं शूलपाणिम्। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यम्॥ ५ ॥
कलातीतकल्याणकल्पान्तकारी। सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी॥
चिदानन्दसन्दोहमोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥ ६ ॥
न यावत् उमानाथपादारविन्दम्। भजन्तीह लोके परे वा नराणाम्॥
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशम्। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासम्॥ ७ ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजाम्। नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम्॥
जराजन्मदु:खौघतातप्यमानम्। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो॥ ८ ॥
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतुष्टये। ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भु: प्रसीदति॥ ९॥

कैलास आश्रम दिव्यविभूतिद्वय निर्वाण रजत महोत्सव
वि० सं० २०५३-५४
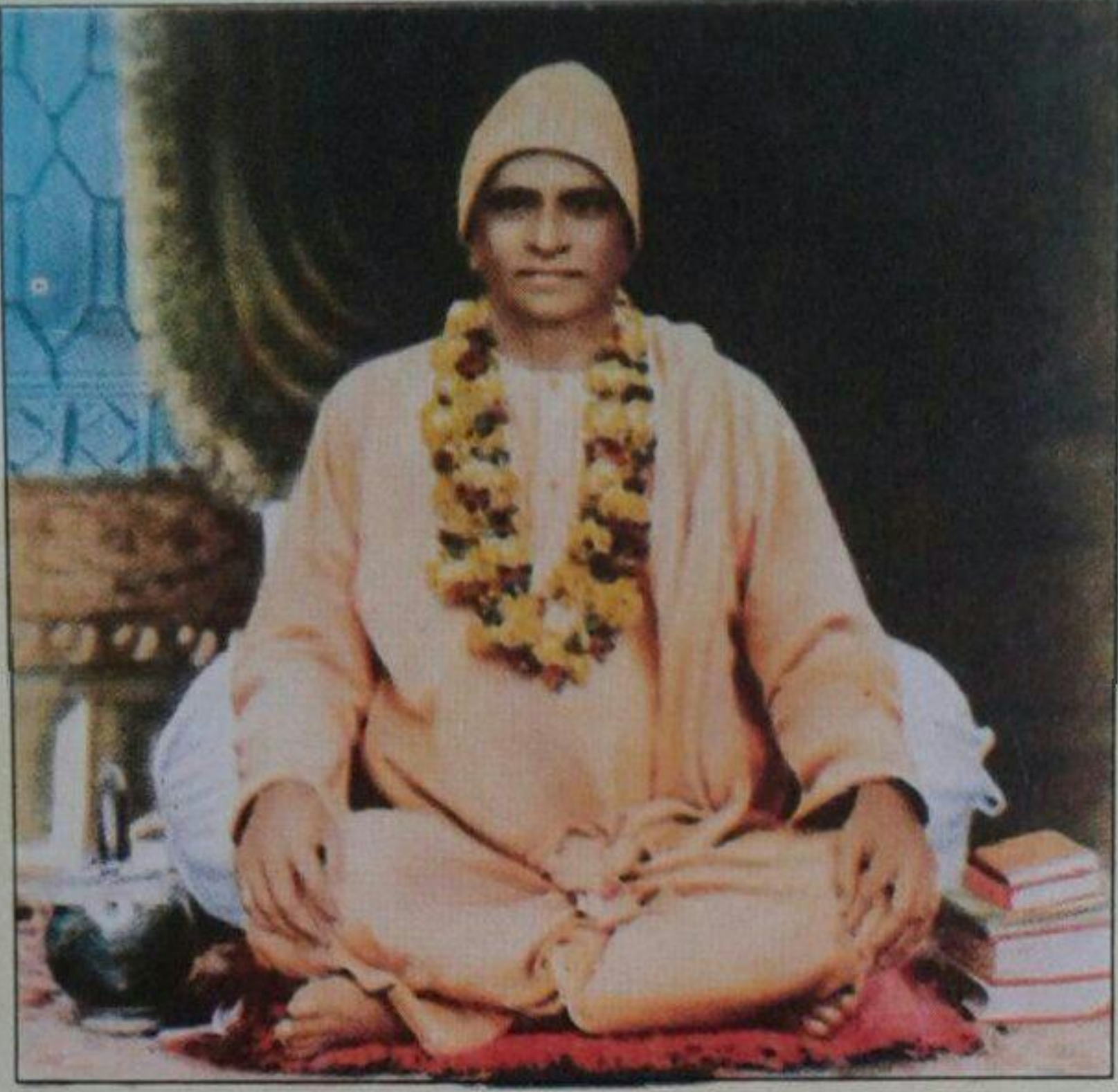
श्री षष्ठ कैलासपीठाधीश्वर आचार्य महामण्डलेश्वर
श्रीमत्स्वामी विष्णुदेवानन्दगिरि जी महाराज (बड़े महाराज जी)
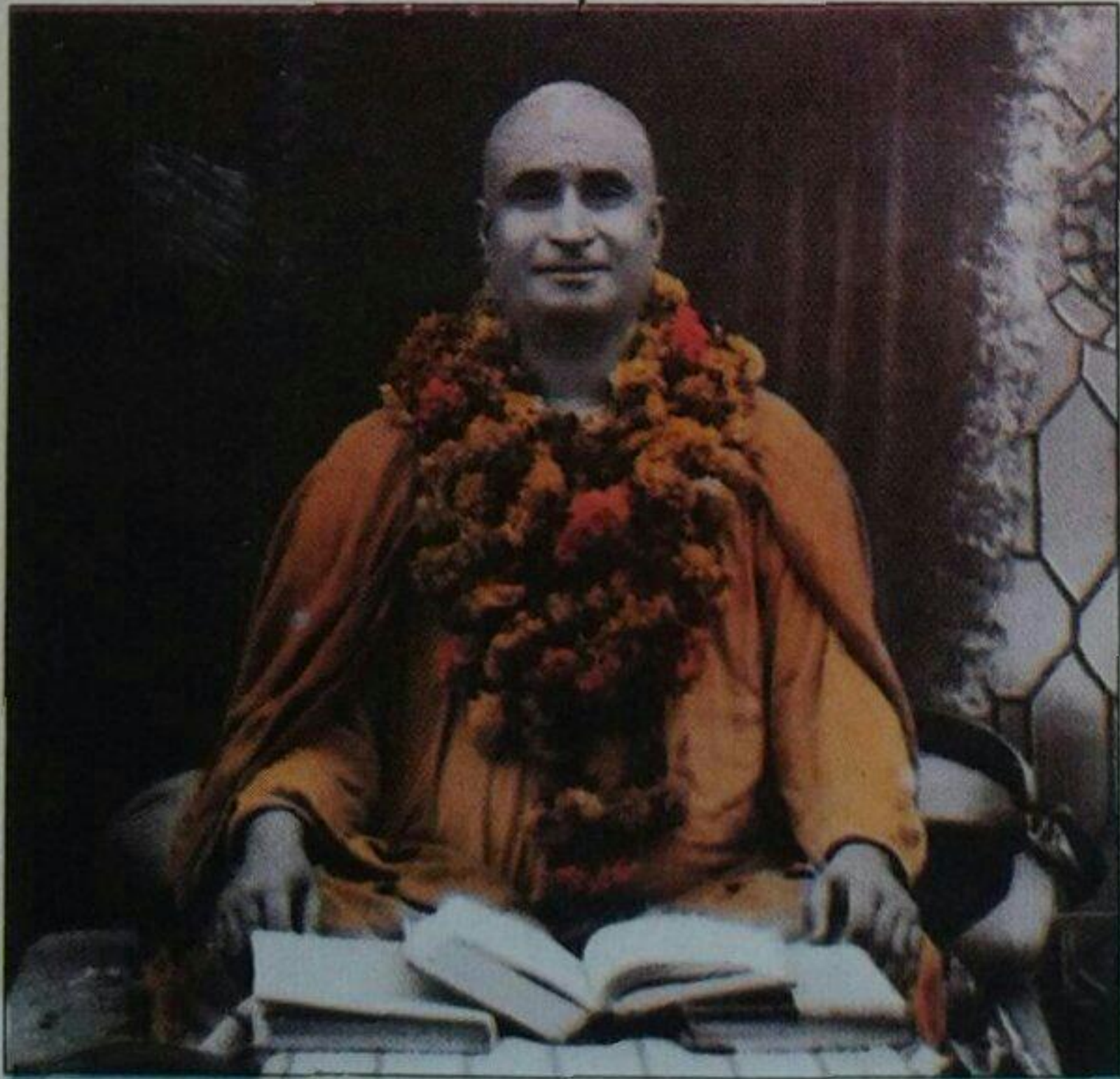
श्री अष्टम कैलासपीठाधीश्वर आचार्य महामण्डलेश्वर
श्रीमत्स्वामी चैतन्यगिरि जी महाराज (शास्त्री जी)